जुलाई-2013 ◆ वर्ष 2 ◆ अंक 2 ◆ उदयपुर

ओ३म्

सत्यार्थ सौरभ

जुलाई-२०१३

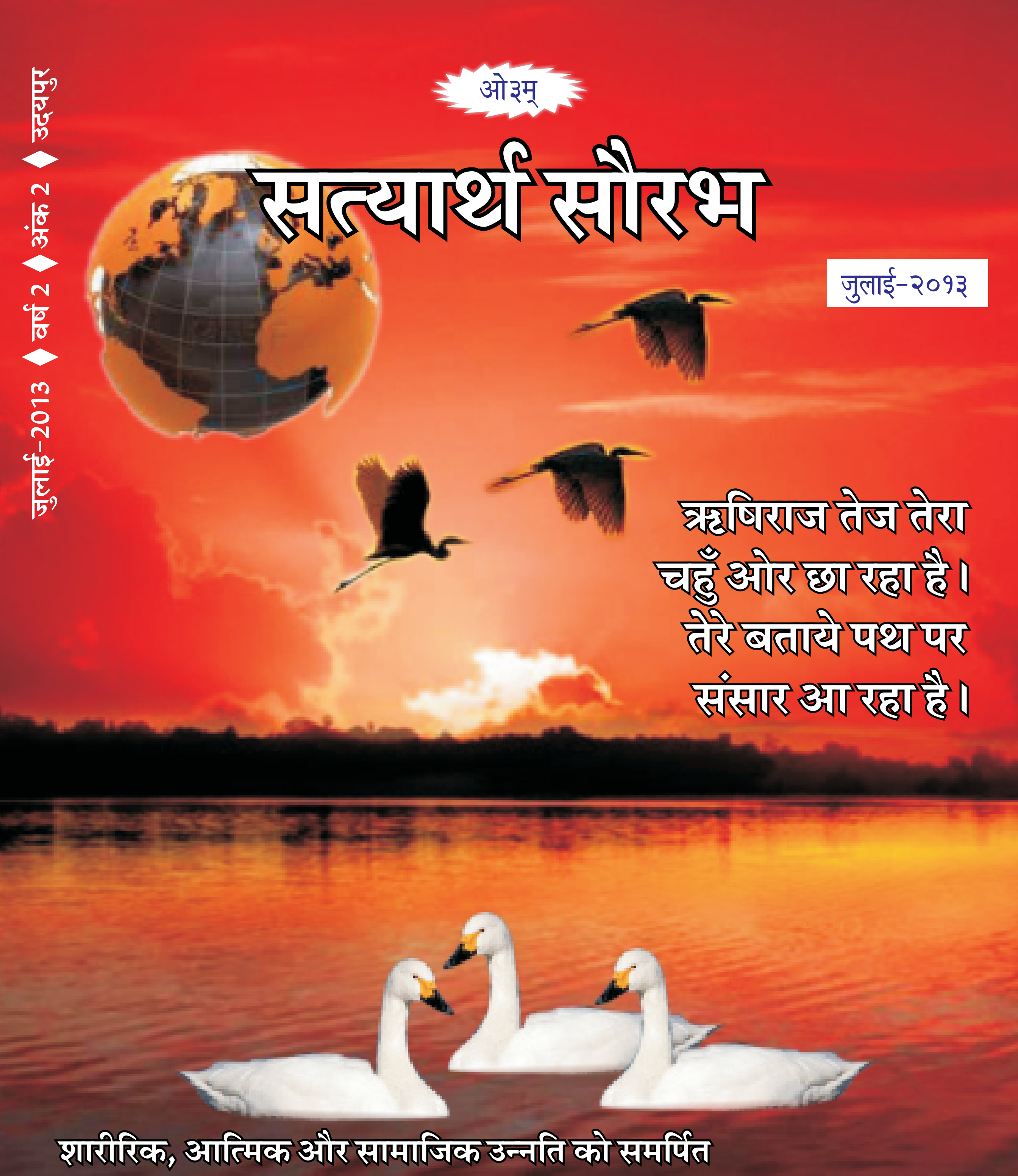

ऋषिराज तेज तेरा
चहुँ ओर छा रहा है।
तेरे बताये पथ पर
संसार आ रहा है।

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति को समर्पित

श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास

नवलखा महल परिसर, गुलाब बाग, महर्षि दयानन्द मार्ग,
उदयपुर-313001 (राज.)

₹ १० १६

शुद्धता – उत्तमता – गुणवत्ता
3 महत्त्वपूर्ण काम
1 नाम
DEGGI MIRCH
Chunky Chat masala
Chana masala
एम डी एच
मसाले
असली मसाले सच - सच
Sambhar masala
Pav Bhaji masala
Peacock Kasoori Methi
Garam masala
Kitchen King
Dal Makhani masala
महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लिमिटेड
9/44, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015
Website : www.mdhspices.com
ESTD. 1919

सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को अपने आँचल में समेटे, सम्पूर्ण परिवार के लिए, हर आयु समूह के लिए, पठनीय और समर्पित

न्यास का मासिक मुखपत्र

सत्यार्थ सौरभ

प्रमुख संरक्षक – सत्यार्थ सौरभ
महाशय धर्मपाल जी (एम.डी.एच.)
डॉ. सुखदेव चन्द सोनी (अमेरिका)

परामर्शदाता संपादक मण्डल
डॉ. महावीर मीमांसक
आचार्य वेदप्रकाश श्रोत्रिय
डॉ. ज्वलंत कुमार शास्त्री
डॉ.सोमदेव शास्त्री
डॉ. रघुवीर वेदालंकार
आचार्य वेदप्रिय शास्त्री

सम्पादक
अशोक आर्य

प्रबन्ध सम्पादक
भवानी दास आर्य

प्रबन्ध सहयोग
नवनीत आर्य

व्यवस्थापक
सुरेश पाटोदी (मो.9829063110)

सहयोग ◆ भारत	विदेश
संरक्षक - ११००० रु.	$ 1000
आजीवन - १००० रु.	$ 250
पंचवर्षीय - ४०० रु.	$ 100
वार्षिक - १०० रु.	$ 25
एक प्रति - १० रु.	$ 5

भुगतान राशि धनादेश/चैक/ड्राफ्ट
श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास
के पक्ष में बना न्यास के पते पर भेजें।
अथवा यूनियन बैंक ऑफ इण्डिया, उदयपुर
खाता संख्या : ३१०१०२०१००४१५१८
IFSC CODE- UBIN 0531014
में जमा करा अवश्य सूचित करें।

सृष्टि संवत्
१९६०८५३११४
आषाढ़ कृष्ण चतुर्दशी
विक्रम संवत्
२०७०
दयानन्दाब्द
१८९

सत्यार्थ-सौरभ में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र उदयपुर ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

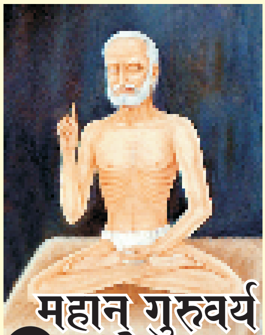

०७ को शतशः नमन

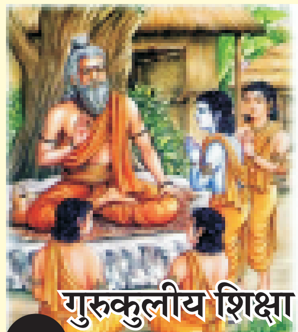

२६ की विशेषता

July - 2013

विज्ञापन शुल्क (प्रति अंक)
कवर २ व ३ (भीतरी आवरण) रंगीन ३५०० रु.
अन्दर पृष्ठ (श्वेत-श्याम)
पूरा पृष्ठ (श्वेत-श्याम) २००० रु.
आधा पृष्ठ (श्वेत-श्याम) १००० रु.
चौथाई पृष्ठ (श्वेत-श्याम) ७५० रु.

समाचार २२
हलचल २३
०४ वेद सुधा
०६ सत्य का महत्व
११ तीर्थ
१३ धर्म : एक वैज्ञानिक विश्लेषण
१८ 'सत्य और अहिंसा में प्रमुख कौन?
२१ Life becomes so LESS
२४ शाश्वत है भारतीय संस्कृति
२७ दयानन्द सूक्ति - संग्रह
२८ महाभारत मेरी दृष्टि में
३० बाल वाटिका

स्वामी – श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर
वर्ष - २ अंक - २
मुद्रण – द्वारा - चौधरी ऑफसेट, (प्रा.लि.) ११-१२, गुरु रामदास कॉलोनी, उदयपुर

प्रकाशक
श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास
नवलखा महल, गुलाब बाग, उदयपुर (राजस्थान) ३१३००१
(०२९४) २४१७६९४ , ९३१४५३५३७९, ९८२८९२९७४७
www.satyarthprakashnyas.org, E-mail : satyarthsandesh@gmail.com

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य

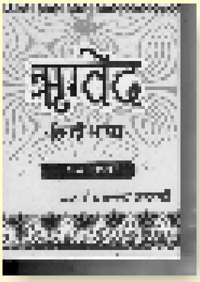

वेद सुधा

उच्छिष्टं चम्वोर्भर सोमं पवित्र आ सृत्र।
नि धेहि गोरधि त्वचि।। -ऋग्वेद १/२८/९

प्रस्तुत वेदमन्त्र में शरीर के सर्वोत्तम रत्न सोम को नष्ट न होने देने की प्रेरणा की गई है। शरीर की टूट फूट को ठीक करने में जितना इसका विनियोग हो जाय उससे बचे सोम को मस्तिष्क व शरीर के निमित्त सुरक्षित रखना चाहिये। इस कोश से ज्ञानाग्नि में सदा समिधा डालते ज्ञानाग्नि को चमकाया जा सकेगा और रोग नाश से शरीर को पुष्ट बनाया जा सकेगा। सोम संरक्षण से शक्ति की वृद्धि होगी और मन में ईर्ष्या, द्वेष आदि की हीन भावनाऐं उत्पन्न नहीं होगी।
हम सोम को शरीर में सुरक्षित रख मस्तिष्क , शरीर को सुन्दर तथा मन को पवित्र बनाऐं।

अच्छे संकल्प मानसिक शक्ति बढाते हैं।
(Good determinations develops mental power)

समिन्द्र गर्दभं मृण नुवन्तं पापयामुया।
आ तू न इन्द्र शंसय गोस्वश्वेसु शुभ्रिषु सहस्रेसु तुवीमघ।। -ऋग्वेद १/२९/५

प्रस्तुत वेदमन्त्र में दूसरों की निन्दा न करने की प्रेरणा की गई है। प्रभु कृपा से कभी अशुभ शब्दों के बोलने वाले गधे के समान न बनें। समझदार बनकर सदा शुभ शब्द ही बोलें। दूसरों के अवगुणों को प्रकट करना ना समझी का काम है। इससे व्यर्थ वैर विरोध बढ़ता है और पाप कथा अपने अकल्याण का कारण हो जाती है। परमात्मा के समान तुवीमघ (प्रशंसनीय) बनने का मार्ग यही है कि औरों की निन्दा न कर अपने जीवन को उत्कृष्ट बनाया जाय।
हम दूसरों की अपकीर्ति प्रकट करने वाली पापमयी वाणी से बच समझदार बनें।

घृणा का निकला प्रत्येक भाव बलपूर्वक स्वयं के पास लौट आता है।
(Every bit of haded that goes out, come back to him in full force.)

अनु प्रत्नस्यौकसो हुवे तुविप्रतिं नरम्।
यं ते पूर्वं पिता हुवे।। -ऋग्वेद १/३०/९

प्रस्तुत वेदमन्त्र में प्रभु का सन्देश सुनते रहने की प्रेरणा की गई है। मनुष्य संसार यात्रा में प्रकृति के चमकीले पदार्थों में आकृष्ट है। उनके तमाशों, आनन्द में अपने वास्तविक पिता और घर को ही भूल जाता है। सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक प्रभु ही हमारे पिता हैं और ब्रह्मलोक ही हमारा घर है। प्रभु सदा हमें इस यात्रा में अपने को यात्री समझते हुए यहाँ ही न फँसकर अपने घर वापस जाने को पहले से ही पुकार रहे होते हैं। हम केवल कष्ट के समय ही प्रभु का स्मरण करते हैं जबकि वह सदा स्मरण करते घर लौट जाने की प्रेरणा देते रहते हैं।

हम ब्रह्मलोक को ही अपना वास्तविक घर समझें और उसकी ओर जाने की प्रभु प्रेरणा सुनते रहें।

जीवन एक यात्रा है उसे पूरा कर अपने घर लौटें।

Life is a journey, complete it, return your eternal home.

स नो महाँ अनिमानो धूमकेतुः पुरुश्चन्द्रः।
धिये वाजाय हिन्वतु।। -ऋग्वेद १/२७/११

प्रस्तुत वेदमन्त्र में बुद्धि व शक्ति प्राप्त कर जीवन को पूर्ण बनाने की प्रेरणा की गई है। प्रभु महान्, असीम हैं। उनका दिया ज्ञान वासनाओं को दूर करने वाला होता है। वासनाओं की उपस्थिति में पूर्णता नहीं और अपूर्णता में आनन्द संभव नहीं। इसलिये प्रभु कृपा से मस्तिष्क ज्ञान से परिपूर्ण हो और शरीर शक्ति से भरा हो। शरीर से मल्ल और मस्तिष्क से ऋषि बनें। प्रभुकृपा से हम बुद्धि और शक्ति प्राप्त कर वासनाओं को विनष्ट करते हुए जीवन की पूर्णता की ओर चलें।

जीवन एक चुनौती है उसका सामना करो।

Life is challenge, face it.

जराबोध तद्विविड्ढि विशेविशे यज्ञियाय।
स्तोमं रुद्राय दृशीकम्।। -ऋग्वेद १/२७/१०

प्रस्तुत वेदमंत्र में प्रभु का दृश्य भजन करने वाला बनने की प्रेरणा की गई है। सामान्यतया मनुष्य लड़कपन खेल में, जवानी विषय भोग में बिता देता है। वृद्धावस्था में उसे प्रभु स्तवन का बोध होता है। सदा हृदय प्रभु का स्तवन केवल भक्ति कीर्तन तक ही सीमित न रह जाय। प्रभु सब प्राणियों के अन्दर विद्यमान है। अतः प्राणीमात्र की सेवा उनका हित करना ही सच्चा प्रभु स्तवन है। हम जराबोध बुढ़ापे में जाकर चेतने वाले न हों, सदा प्रभु का दृश्य भजन करने वाले बनें।

मनुष्य की सेवा ही प्रभु की सेवा है।

Service of man is service of god.

शिप्रिन्वाजानां पते शचीवस्तव दंसना।
आ तू न इन्द्र शंसय गोष्वश्वेसु सहस्रेषु तुवीमघ।। -ऋग्वेद १/२९/२

प्रस्तुत वेदमंत्र में स्वकर्मों द्वारा प्रशंसनीय एवं ऐश्वर्यवान बनने की प्रेरणा की गई है। उत्तम प्रज्ञा एवं कर्मों वाले इन्द्रियों के अधिष्ठाता मनुष्य सात्विक भोजन एवं नियमित प्राणायाम द्वारा अपनी शक्तियों का रक्षण करते हुए शुद्ध एवं प्रसादयुक्त ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्मेन्द्रियों को प्रशंसनीय और महान् ऐश्वर्यशाली बना सकते हैं। वह अपने पुरुषार्थ और कर्मों से ही इन्द्रियों को शुद्ध व प्रसन्न रखते अपने ऐश्वर्य को बढ़ाते हैं। हम प्रभु प्रदत्त अपनी इन्द्रियों को शुद्ध व प्रसन्न बना ऐश्वर्यशाली बनें।

पूरा काम न करना अपने को धोखा देना है।

You cheat your self when you do poor.

प्रस्तुति - महेश चन्द्र गर्ग, सासनी

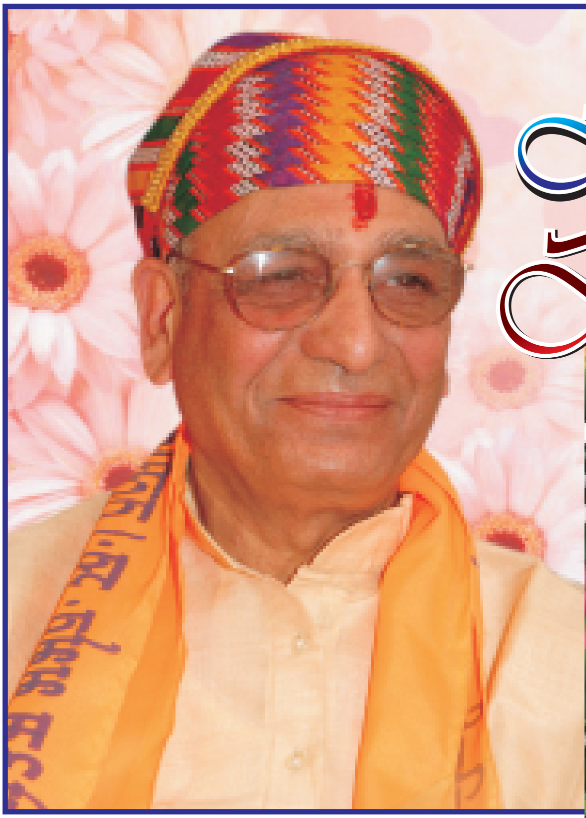

Happy Birthday

Birthdays come only once a year. But a person like you brings life to hundreds every single day! We are so glad that God sent you into this world. Happy Birthday, sir!

all Trusties

आर्यरत्न डॉ. ओमप्रकाश (म्याँमार) स्मृति पुरस्कार

* न्यास द्वारा ON LINE TEST प्रारम्भ।
* वर्ष में तीन बार दिया जावेगा ५१०० रु. का उपरोक्त पुरस्कार।
* आयु, लिंग, योग्यता की कोई बाधा नहीं। आबाल-वृद्ध, नर-नारी, छोटे-बड़े सभी पात्र हैं।
* विश्व भर के लोगों से इस ON LINE TEST में भाग लेने का अनुरोध।

बेवसाइट - www.satyarthprakashnyas.org

महर्षि दयानन्द चित्र दीर्घा-नवलखा महल

नवलखा महल जीर्णोद्धार तथा सौन्दर्यीकरण हेतु जो महानुभाव अर्थ सहयोग भेज रहे हैं, उनका आभार प्रदर्शित करते हैं। **छोटी-बड़ी जो भी आहुति हो निःसंकोच इस पवित्र कार्य हेतु अर्थ सहयोग प्रदान करें।**

कर्मयोगी महाशय धर्मपाल
अध्यक्ष - न्यास

राष्ट्र करे तरक्की,
राष्ट्र बने महान्।
जब सब मिलकर दें,
राष्ट्रहित में अपना योगदान॥

सत्यार्थ सौरभ
घर-घर पहुँचावें

वर्तमान ग्राहकों के लिए रियायती योजना

आपकी सदस्यता वर्ष यदि आप पंचवर्षीय सदस्यता में परिवर्तित करते हैं तो चार सौ की बजाय केवल तीन सौ रु. भेज दें तो आपको पंचवर्षीय सदस्य में नामित कर लिया जायेगा। इसी प्रकार अगर आप आजीवन सदस्य बनना चाहते हैं तो बजाय एक हजार रु. के मात्र पाँच सौ रु. प्रेषित करने का श्रम करें, तो आपको आजीवन सदस्यता सूची में सम्मिलित कर लिया।

आत्म निवेदन

चाहिए दण्डी स्वामी विरजानन्द

गुरु पूर्णिमा पर विशेष

वेद में अनेक मन्त्रों में गुरु के अंदर अनेक गुणों का होना आवश्यक माना गया है। संक्षेपतः
१. विद्वानों को अत्यन्त प्रिय हो, उत्तम रूप गुण सौन्दर्य सम्पन्न हो, पवित्रता से युक्त हो, आप्त विद्वान् हो (यजु. ११.३७)
२. पिता के समान सबकी रक्षा करने वाला हो (ऋ ३.३१.२१)
३. वह निन्दा स्तुति, हानि-लाभ आदि को सहने वाला हो, पुरुषार्थी हो, सबके साथ मित्रता करने वाला हो (यजु. ३४.१८)
४. जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों से पृथिवी से लेकर परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों को साक्षात् किया हो, सत्य विद्या और आचरण की वृद्धि की अभिलाषा रखता हो, सदैव धर्म के मार्ग में चले। (ऋ.३।६२।१८)

जब समाज में योग्य गुरु होते हैं तो श्रेष्ठ जीवन मूल्यों की स्थापना होकर सदाचारी नागरिक गण निर्मित होने से प्रत्येक प्रकार से स्वस्थ राष्ट्र निर्मित होता है। ऐसे ही योग्य आप्त गुरुओं के बारे में वेद में स्पष्ट रूप से कहा है।

'जो मनुष्य विद्वानों से शिक्षा पाकर सबका सत्कार करते हैं वे राज्य को पाकर सूर्य के समान प्रकाशित होते हैं।' (ऋ ६.१७.६)

श्री राम के व्यक्तित्व का निर्माण गुरु वशिष्ठ और विश्वामित्र ने किया था जो स्वयं स्थितप्रज्ञ थे। तभी तो राम ने राज्याभिषेक के सुखद समाचार को तथा तत्काल ही वनवास के दुःखद प्रसंग को समान भाव से सुना। हर्ष तथा शोक में समान भाव रख पाने के अभ्यास का पाठ्यक्रम आज कहाँ उपलब्ध है? तभी धन सम्पदा, भौतिक सुखों में अनासक्त तथा कर्तव्य भाव से ही रत् रहने वाले नागरिकों के निर्माण का अभाव होने से आज स्वार्थ का नंगा रूप सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा है। जब गुरु में ही उपरोक्त गुण नहीं हैं तो शिष्यों में ऐसे गुण विकसित होने का प्रश्न ही नहीं उठता। जब वशिष्ठ नहीं तो राम कहाँ? सान्दीपनि नहीं तो कृष्ण कहाँ? समर्थ गुरु रामदास नहीं तो शिवा कहाँ? चाणक्य नहीं तो चन्द्रगुप्त कहाँ? राष्ट्रहित में आत्मोत्सर्ग कर देने की भावना कहाँ से पैदा होगी?गुरु शिष्य के सम्बन्धों के स्वरूप को रेखांकित करते हुए अथर्ववेद (११/५/३) में कहा है जैसे माता अपने गर्भ में शिशु को रखती है गुरु भी अपने गर्भ में शिष्य को रख समस्त विद्याओं के साथ मनुष्यत्व के सभी उदात्त गुणों का उसमें आधान कर समय आने पर प्रकट कर देता है।

आज गुरुओं की तो बाढ़ सी आ गई है। परन्तु उनमें गुरु होने का एक भी लक्षण नहीं है। इनका लक्ष्य केवल स्वार्थ-सिद्धि है। स्कूल-कॉलेज के अध्यापकों का भी अपने शिष्यों के साथ संबंध शिक्षा के लेन देन तक है। शिक्षा भी कौनसी? जो शिक्षार्थी को नौकरी दिला सके। वस्तुतः बात यह है कि शिक्षार्थी का भी यही उद्देश्य है। उसका सम्बन्ध गुरु के साथ इतना ही है कि वह विषय विशेष में उसे प्रवीण कर दे। अतः गुरु-शिष्य के मध्य सीधा-सीधा व्यापारिक रिश्ता रह गया है। शिष्य या उसके अभिभावक धन देते हैं अध्यापक पैसा लेता है। गुरु की योग्यता का भी मापदण्ड यही है कि उसके कितने शिष्य प्रतियोगी परीक्षाओं में सफल हुए? यही योग्यता अध्यापक का मूल्य तय करती है। अध्यापक भी इसी की मार्केटिंग करता है। शिक्षा के क्रय-विक्रय के युग में जैसा समाज निर्मित होता है वह हमारे समक्ष है।

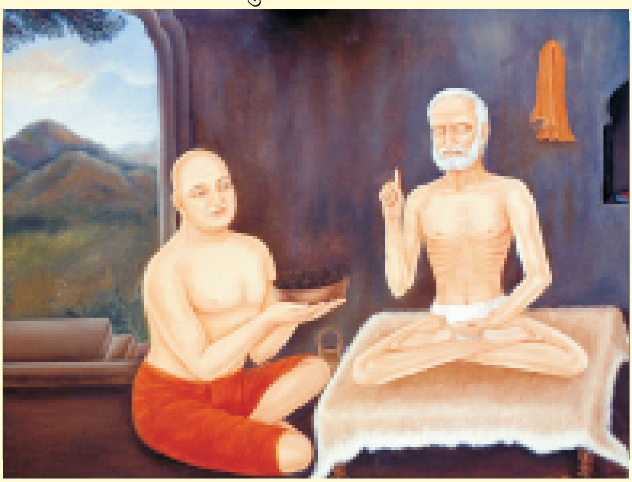

इस सब पर भी मानव प्रवृत्ति के आधार पर उसकी आध्यात्मिकता इच्छाएँ भी रहती हैं। काश उपरवर्णित योग्यताधारी गुरु इस क्षेत्र में होते तो भी अभिलषित फल की प्राप्ति हो सकती थी पर यहाँ भी धन्धे ने पैर पसार लिए हैं। गुरुओं की संख्या में तो बेतहाशा वृद्धि हुई है। पर वास्तव में ये दुकानें हैं जो मुक्ति प्राप्ति तथा लौकिक समस्याओं से छुटकारा दिलाने के एक से एक नायाब तरीके प्रस्तुत कर रहे हैं। कोई बीजमंत्र देकर, कोई नामदान देकर, कोई अपना उगला हुआ पीक सेवन कराके तो कोई आलू चाट खिलाकर सर्वमनोकामनाएँ पूर्ण कर रहा है। भ्रष्टाचारियों, धोखेबाजों का सान्निध्य पतन-मार्ग को ही उद्घाटित कर रहा है यह प्रत्यक्ष है। युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द ने अनेक वर्षों तक सच्चे गुरु की खोज की। उस समय में भी गुरुओं की कमी नहीं थी। पर वे दयानन्द की कसौटी पर खरे नहीं निकले। अन्ततोगत्वा १९६० में मथुरा स्थित गुरुवर्य विरजानन्द दण्डी के रूप में उन्हें सच्चे गुरु की प्राप्ति हुयी। विरजानन्द ने फौलादी दयानन्द का निर्माण किया। अगर दयानन्द अयोग्य गुरुओं का सान्निध्य पा अपनी खोज समाप्त कर देते तो विश्वमानवता को वह नहीं मिल पाता

गुरु विरजानन्द दण्डी –

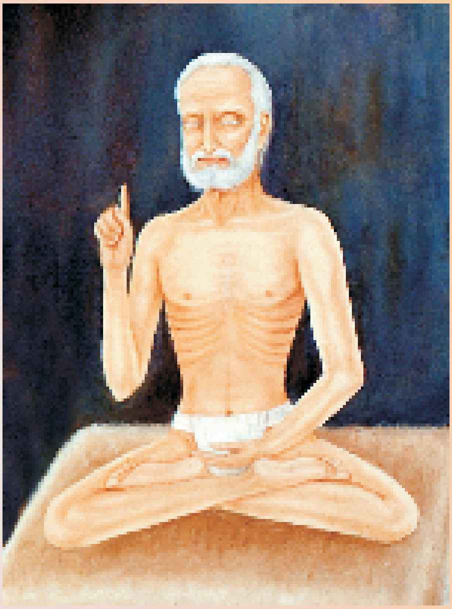

जिस महापुरुष ने अनार्ष ग्रन्थों का प्रबल विरोध कर वैदिक संस्कृति की स्थापनार्थ पुरुषार्थ कर आर्य जाति के अस्तित्व की रक्षा के लिए, महर्षि दयानन्द जैसा रत्न प्रदान किया, वह और कोई नहीं प्रातःस्मरणीय दण्डी स्वामी विरजानन्द ही हैं।

व्याकरण सूर्य दण्डी जी का जन्म पंजाब के जालन्धर जिले में करतारपुरा के निकट एक छोटे से ग्राम गंगापुर में सन् १७७६ में, सारस्वत ब्राह्मण नारायण दत्त जी के यहाँ हुआ। इनका बचपन का नाम व्रजलाल था। पाँच वर्ष की आयु के पूर्व ही चेचक के कारण उनकी आँखों की ज्योति जाती रही परन्तु ये विलक्षण स्मृति व तीव्र बुद्धि के धनी थे।

बचपन में ही अनाथ हो गए बालक व्रजलाल ने तेरह वर्ष की आयु में ही गृह त्याग दिया । घोर तपश्चर्या, गायत्री मंत्र का अनुष्ठान इनके नित्यकर्म में सम्मिलित थे। १८ वर्ष की अवस्था में आपने स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से संन्यास दीक्षा ग्रहण की। अद्भुत, विलक्षण स्मृति के धनी दण्डी विरजानन्द ने ज्ञानार्जन के क्षेत्र में कदम रखा। स्वगुरु से प्रारम्भ इस यात्रा में काशी व कोलकाता का स्थान प्रमुख था।

अलवर के राजा विनयसिंह ने आपका शिष्यत्व स्वीकार किया। अलवर नरेश की प्रार्थना पर ही उन्होंने 'शब्दबोध' की रचना की। एक दिन निश्चित समय पर राजा पढ़ने नहीं आए। राजा के इस वचन भंग के कारण दण्डी जी ने अलवर छोड़ दिया।

अनेक विद्वानों का मत है कि १८५६ में मथुरा के जंगलों में १८५७ की क्रान्ति से पूर्व एक सभा हुई थी जिसमें नाना साहब पेशवा, अजीमुल्ला खान आदि की उपस्थिति में प्रक्षाचक्षु दण्डी विरजानन्द ने 'आजादी जन्नत है और गुलामी दोजख है' का नारा दिया था।

जो भी हो भारत को दयानन्द जैसा सर्वप्रतिभावान् युग प्रवर्तक देने का श्रेय दण्डी स्वामी विरजानन्द जी को ही जाता है।

व्याकरण का यह सूर्य १४ सितम्बर १८६८ को अस्त हो गया।

जो अल्पकाल में ही दयानन्द ने दिया। इसका श्रेय निश्चित दण्डी स्वामी विरजानन्द जी को जाता है।

आज पुनः गुरुवर विरजानन्द जी जैसे अध्यात्मवेत्ता की आवश्यकता है जो समाज में व्याप्त बुराइयों के समूल को विनष्ट करने हेतु एक और दयानन्द को तैयार करें। गुरु पूर्णिमा का दिन श्रद्धा से ओतप्रोत भावनाओं सहित गुरुवर विरजानन्द को स्मृत करने का दिन है।

– अशोक आर्य
६३१४२-३५१०१, ६००१३-३६८३६

❑❑❑

Shri Veer Mukhi Honoured

Nassau County Executive EDMANGANO honoured Shri Veer Mukhi for their outstanding services/ contributions to the Indian American Society. The presentation had been made while celebrating Indian American night on Sunday June 2, 2013.

श्री वीरमुखी का उदयपुर प्रवास

आर्य समाज, लोंग्स आयलैण्ड, न्यूयार्क के श्री युधिष्ठिर मुखी व श्री वीरमुखी (सपत्नीक) ने अपनी भारत यात्रा के अवसर पर दिनांक १४ मई से १७ मई तक नवलखा महल उदयपुर में प्रवास किया। न्यास की समस्त गतिविधियों की जानकारी प्राप्त कर वे अत्यधिक प्रसन्न हुए। श्री युधिष्ठिर जी, सरोज जी, वीरमुखी जी व सविता जी ने दयानन्द धाम, ईसवाल पर पौधारोपण भी किया

सत्य का महत्व

स्वामी तत्त्वबोध सरस्वती

समाज और राष्ट्र के अभ्युदय के लिए सत्य की प्रतिष्ठा अनिवार्य है। सत्य को आधार शिला के रूप में प्रतिष्ठापित करने पर ही राष्ट्र का कल्याण होता है। अथर्ववेद का कथन है कि सत्य, ऋत् (विश्वव्यापी प्राकृतिक नियम), दीक्षा (समर्पण) तप (अनुशासन), ब्रह्म (ज्ञान) और यज्ञ (इदं न मम की भावना) ये पृथ्वी को रोके हुए हैं। सत्य से भूमि रुकी हुई है और ऋत से सूर्य प्रतिष्ठित है।

यजुर्वेद का कथन है कि यज्ञ की सफलता तभी है, जब हम असत्य को छोड़कर सत्य के मार्ग को अपनाते हैं। ऋग्वेद का कथन है कि सत्य से जीवन में जागृति आती है। सत्य-वचन मनुष्य की सब ओर से रक्षा करता है। इसलिए हमारे राष्ट्र ने ''सत्यमेव जयते''- को अपना मोटो अपनाया।

वेदों, उपनिषदों, दर्शनों, ब्राह्मण ग्रन्थों, स्मृतियों में तो सत्य की महिमा व प्रशंसा गाई ही गई है, उससे कम महिमा रामायण, महाभारत, गीता व पुराणों में भी नहीं गाई गई। मनु महाराज ने तो यहाँ तक कह दिया कि ''न हि सत्यात् परो धर्मः नानृतात् पातकं परम्'' यानि सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं और असत्य से बढ़कर कोई पाप नहीं। इन्हीं भावों को अपने शब्दों में तुलसीदास जी ने इस भाँति लिखा है- ''साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप, जाके हृदय साँच है, ताके हृदय आप''। उपनिषद् का मंत्रांश भी यही बात, और बल देकर कहता है ''सत्यमेव जयते नानृतं'' सत्य की ही विजय होती है असत्य की नहीं। सत्य से अभिप्राय सिर्फ सत्य बोलना ही नहीं होता है। सद्व्यवहार, सद्आचार, सद्विचार व सत्कार्य सभी सत्य में समाहित हैं। सत्य बोलना तो सिर्फ सत्य की पहली सीढ़ी है। जिस पर चढ़कर व्यक्ति अपने जीवन को ऊपर की ओर यानि उत्थान की ओर ले जा सकता है। जीवन में सभी सद्व्यवहार

न्यास के संस्थापक अध्यक्ष पूज्य स्वामी तत्वबोध जी सरस्वती भूगर्भवेत्ता तथा सफल उद्योगपति थे परन्तु स्वाध्याय-बल से उन्होंने वैदिक-सिद्धान्त- ज्ञान भी बखूबी प्राप्त किया था। उन्होंने कतिपय सुन्दर सैद्धान्तिक लेख भी लिखे थे। उनकी पुण्यतिथि के अवसर पर इनमें से एक पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत है। -अशोक आर्य

आयें हम सभी कृतज्ञ आर्यजन उनके मार्ग का अवलम्बन करने की शपथ लें।

करना, आचरण में शुद्धता रखना, विचारों में पवित्रता रखना और सत्य को जीवन में धारण करके उत्तम कर्म करने वाला भी हो तो वह व्यक्ति मोक्ष प्राप्त करने का अधिकारी भी बन जाता है।

सत्यवादी व्यक्ति छल, कपट, दुराचार, द्वेष, ईर्ष्या, घृणा व अंहकार आदि दुर्गुणों व दोषों से कोसों दूर रहता है। वह हमेशा निर्मल, पवित्र और उदार हृदय का ही होता है।

यदि हम अपने गौरवमय इतिहास का अवलोकन करें तो ज्ञात हो जायेगा कि जहाँ सत्य रहा है वहीं विजय निश्चित हुई है। त्रेता में हम देखते हैं कि रावण दुष्ट और पापी राजा था लेकिन था बड़ा बलशाली। उसका आतंक लंका में ही नहीं बल्कि दक्षिण भारत में भी उसकी छावनियाँ रहती थीं और वे दुष्ट राक्षस साधु, तपस्वियों के यज्ञों में बाधा डालते थे। उनके यज्ञों का विध्वंस करते थे, जिससे तपस्वी लोग बहुत भयभीत और दुखी रहते थे। उनके उद्धार के लिए राम ने हाथ में धनुष उठाकर कहा था ''निशिचरहीन करों महि, भुज उठाय प्रण कीन्ह'' मैं भुजा उठाकर यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि इस धरती को निशिचरहीन कर दूंगा, तभी अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझूंगा। संयोगवश कारण भी बन गया। रावण ने श्रीराम की धर्मपत्नी सीता का हरण कर लिया और तब श्रीराम के पास सैन्य शक्ति कम होते हुए भी उन्हीं की विजय हुई और राम ने रावण को सिर्फ पराजित ही नहीं किया बल्कि उसका साथ देने वाले पूरे कुटुम्ब का रावण समेत नाश कर दिया।

इसके पीछे भी ईश्वर की न्याय व्यवस्था काम कर रही थी। जिससे राम को विजय दिलाने के सुअवसर स्वयमेव ही जुटते गए। जैसे बिना कोई विशेष प्रयास किये श्री राम के पक्ष में श्री हनुमान, सुग्रीव, नल आदि का आना आदि, जो विजय के कारण बने। इसी प्रकार द्वापर में कंस, जरासंध, शिशुपाल, जयद्रथ, दुर्योधन आदि अन्यायी

राजाओं का बड़ा भयंकर आतंक था। फिर भी श्रीकृष्ण ने अपनी शारीरिक शक्ति व कुशल बुद्धि के बल से सबका विनाश किया। श्री कृष्ण सत्य व न्याय के पक्ष में थे। इसीलिये उनके सफलता प्राप्ति के सब रास्ते अपने आप ही खुल गये। देवकी की कोख से जेल में जन्म होकर उनका नन्द व यशोदा के घर पर पालन पोषण होना, गोकुल में सब ग्वालों का समर्थन मिलना, बलराम, भीम, अर्जुन जैसे वीर प्रतापी, धनुषधारी योद्धाओं का सहयोग मिलना यह सब असत्य पर सत्य की विजय के ही लक्षण थे, जिससे श्री कृष्ण उन अन्यायी पापियों व दुष्टों का संहार कर सके।

दुष्ट व धर्मान्ध औरंगजेब, जो मुगल साम्राज्य का एक शक्तिशाली बादशाह था, उसके अन्याय को मिटाने में, छत्रपति शिवाजी व गुरु गोविन्दसिंह ने, जो उसकी तुलना में काफी

कमजोर थे, सफलता प्राप्त की। समय का प्रवाह विपरीत होते हुए भी एक तपोनिष्ठ बालब्रह्मचारी वैदिक विद्वान् महर्षि दयानन्द ने सत्य सनातन वैदिक धर्म को, असंख्य पाखंडियों की टक्कर में, विजय दिलवाई। और अन्यायी धूर्त, पर शक्तिशाली अंग्रेजों से सत्य व अहिंसा के पुजारी महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह के बल पर भारत को स्वतंन्त्रता दिलवाई। यह सब असत्य, अन्याय पर सत्य व न्याय की विजय ही थी।

अभी-अभी अफगानिस्तान में आतंकवादी तालिबान संगठन जिसका सरगना ओसामा बिन लादेन व मुल्ला मोहम्मद उमर थे उन्होंने विश्वभर में आतंक फैला रखा था। उनका कैसे पतन व सर्वनाश हुआ, हम सभी ने अपनी आँखों से देखा ही है। अब पाकिस्तान भी असत्य और अन्याय के पथ पर अग्रसर है। अपने आतंकवादी संगठनों को सहयोग ही नहीं, प्रशिक्षण देकर भारत के ऊपर भयंकर विनाशकारी हमले करवा रहा है। इसीलिये अब इन सब आतंकवादी संगठनों का विनाश होना भी सुनिश्चित है।

ईश्वर की अपनी न्याय व्यवस्था ही ऐसी है। जिसके अधीन सत्य की विजय और असत्य की पराजय होती है। उदाहरण के तौर पर उदार व सच्चे व्यक्ति की सब प्रशंसा करते हैं और उसका सहयोग भी सभी देते हैं। इसके विपरीत अनुदार व झूठे व्यक्ति की सब निंदा करते हैं और उसको सहयोग नहीं देना चाहते। ईश्वर की न्याय व्यवस्था के अनुसार परोपकारी, दयालु, त्यागी, तपस्वी, न्यायकारी व सत्यवादी व्यक्ति अपने हर काम में सफल होता है, कारण सारा वातावरण उसके पक्ष में बन जाता है और दुष्ट, अन्यायी, निर्दयी, पापी, अभिमानी, स्वार्थी व बेईमान व्यक्ति अपने हर काम में असफल होता है कारण वातावरण उसके विरोध में बन जाता है। यही सत्य की विजय, और असत्य की पराजय का आधार है। जो स्थिति बड़े-बड़े राज्यों राष्ट्रों में होती है, वही स्थिति कभी-कभी धार्मिक व सामाजिक संस्थाओं में भी हो जाती है, उन पर भी कुछ समय के लिए गलत, स्वार्थी पदलोलुप व्यक्ति हावी हो जाते है। ऐसी परिस्थिति में ईश्वर की न्याय प्रक्रिया को दोष नहीं देना चाहिए और न ही चिन्ता व घबराकर धैर्य छोड़ना चाहिए बल्कि डटकर सही प्रक्रिया से मुकाबला करना चाहिए। गलत व्यक्ति निश्चय ही पराजित होंगे, कारण अन्याय अस्थाई होता है। यह भी ध्यान रखें गलत लोगों का हावी होना उनके कर्मों का फल नहीं बल्कि उनके लगातार प्रयत्न, लगन व बुद्धि कौशल (तिकड़मबाजी) का फल है, कारण यह भी तो परिश्रम ही है। इसका फल भी उन्हें मिलना ही चाहिये। ऐसे व्यक्ति कुछ समय के लिए पद प्राप्त कर लेते हैं। परन्तु वे अपने ही स्वाभाविक दोषों जैसे ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, लालच व अहंकार के कारण उस पद को ज्यादा दिन नहीं रख पाते। इसका कारण यह है कि गलत आदमी हर व्यक्ति से गलत व्यवहार करेंगे, गलत व्यक्तियों को सहयोग देंगे और लेंगे, इससे कुछ अच्छे व्यक्ति उस संस्था में होंगे वे भी दूर होते जायेंगे और कुछ समय बाद वह संस्था गलत, स्वार्थी, पदलोलुप व्यक्तियों का जमघट बनकर रह जायेगी। और उनको कहीं से भी कोई सहयोग व मदद नहीं मिलेगी तब वह संस्था ठप्प हो जायेगी और वे स्वार्थी लोग एक दूसरे का दोष निकालते हुए इधर-उधर बिखर जायेंगे। यह उनके कर्मों का फल हुआ। फिर नये सिरे से अच्छे निःस्वार्थी, सेवाभावी लोग आवेंगे तब काम फिर चालू होगा और संस्था सुचारू रूप से चलने लगेगी।

इसीलिए, यह भी न समझें कि किसी गलत व्यक्ति या व्यक्तियों ने कुछ समय के लिये सफलता प्राप्त कर ली तो ईश्वर के घर में न्याय नहीं है। ईश्वर की न्याय व्यवस्था में अच्छे कर्मों का फल अच्छा और बुरे कर्मों का फल बुरा अवश्य मिलता है। निम्नलिखित सूत्र भी यही दर्शाता है।

'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्'

पत्रिका से सम्बन्धित किसी प्रकार की जानकारी/शिकायत के लिये निम्न चलभाष पर सम्पर्क करें।
09314535379

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक भी पत्रिका न मिलने पर कृपया इसी चलभाष पर सम्पर्क करें।

जिन सज्जनों को यह पत्रिका प्राप्त हो रही है, वे तो अवश्य ही 'सत्यार्थ सौरभ' पत्रिका के सदस्य बनें और बनाने की कृपा करें।

तीर्थ

नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

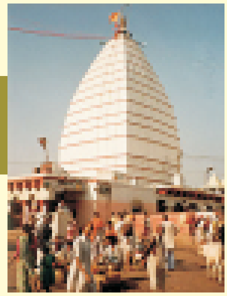

पिछले दिनों घटी एक दुघर्टना ने मुझे अंदर तक झकझोर दिया और सोचने पर विवश कर दिया। आखिर समाज में फैली भ्रान्तियाँ, पाखंड और अंधविश्वास हमें अधोगति की ओर ले जाकर पतन के किस गहरे खड्डे में धकेल रहे हैं? आखिर किस प्रकार इस पतन से हम बच पायेंगे ।

घटना कुछ इस प्रकार की है । अपने एक सामाजिक कार्यकर्त्ता मित्र का फोन आया ''विवेक जी आप कुछ प्रतिष्ठित लोगों को लेकर इधर आ जायें। एक बंद मकान के कमरे से महिला के लगातार कराहने क्रंदन की आवाजें आ रही हैं ।'' बात चौंकाने वाली थी कुछ लोगों के साथ वहाँ पहुँचे। मकान का ताला तोड़कर अंदर घुसे तो देखा कि एक बूढ़ी बीमार माँ अपनी हालत पर रो रही है। पूछने पर पता चला कि बेटा, बहू, बच्चे गर्मियों में 'तीर्थयात्रा' पर गंगा स्नान करने गए हैं। आप साथ क्यों नहीं गईं तो बताया कि ''पहले से ही बीमार थीं।'' फिर बच्चों को ऐसी 'तीर्थयात्रा' पर क्यों जाने दिया? 'उन्हें तीरथ से रोकती तो मुझे पाप लगता।'' वह बीमार बूढ़ी माँ को घर में बाहर से बंद करके चले गए अब कौन सा पुण्य मिलेगा।''वह तो तीरथ पर मेरे लिए ही प्रार्थना करने गए हैं। फिर मंदिर के पंडित ने भी कहा था ''भगवान का नाम लेकर जाओ, तीरथ जा रहे हो भगवान से माँ के लिए प्रार्थना करना, भगवान खुद माँ की रक्षा करेंगे। पंडित की बात मानकर बेटा, बहू, पोते सब मुझे दस दिनों के लिए अकेला छोड़कर दवाईयाँ रखकर और बाहर से ताला लगाकर चले गए।''

हम सोचकर हैरान थे। आखिर यह कैसी तीरथ यात्रा है जो बीमार बूढ़ी माँ को अकेले बेसहारा छोड़कर तीरथ के बहाने गर्मियों में पहाड़ों पर घूमने और गंगा में नहाने की इजाजत देती है और उस पर भी इस मौज मस्ती को तीरथ की धार्मिकता का लबादा पहना दिया गया है। बूढ़ी बीमार माँ को अस्पताल में दाखिल करवाया गया और परिवार को सम्पर्क करके उस तथाकथित तीर्थयात्रा से वापिस आने का अनुरोध किया गया।

इस घटना ने सोचने पर विवश कर दिया आखिर तीर्थ किसे कहते हैं?आखिर स्थान वा नदी विशेष में स्नान का नाम तीर्थ क्यों पड़ा? तीर्थ के क्या लाभ हैं?इन प्रश्नों के उत्तर देव दयानन्द रचित वैदिक साहित्य में मिले। स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश में देव दयानन्द तीर्थ की परिभाषा देते हुए लिखते हैं -

''जिससे दुख सागर से पार उतरें कि जो सत्यभाषण, विद्या, सत्संग, यमादि योगाभ्यास, पुरुषार्थ, विद्या दान आदि शुभ कर्म हैं उसी को तीर्थ कहते हैं। इतर जल स्थल आदि स्थान विशेष को नहीं।''

यहाँ तीर्थ की परिभाषा देते हुए कहा कि दुःख सागर से तारने वाले वा उतारने वाले कर्म विशेष ही तीर्थ कहलाते हैं। यदि हम कर्म फल सिद्धान्त को समझें तो हम जानेंगे कि मनुष्य मननशील विचारशील स्वतंत्र-कर्त्ता है अर्थात् किसी भी कार्य को करने से पूर्व मनुष्य होने के नाते मनन विचार करके स्वतंत्रता पूर्वक करता है। स्वतंत्र-कर्त्ता अर्थात् कार्य को करने, ना करने वा अन्यथा किसी अन्य प्रकार से करने के लिए स्वतंत्र है। स्वतंत्र-कर्त्ता होने के कारण मनुष्य परमपिता परमेश्वर की न्याय व्यवस्था के आधीन भोक्ता भी है। यही हमारे कर्मों के भोग फल ही हमारी नियति, प्रारब्ध या आगामी सुख-दुःख का कारण बनते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि हमारे कर्म ही फल के रूप में हमारे सुख या दुःख का कारण बनते हैं। वेदों में भी स्पष्ट आदेश है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने अपने किए प्रत्येक शुभ-अशुभ कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है, यानि यदि हम दुख सागर

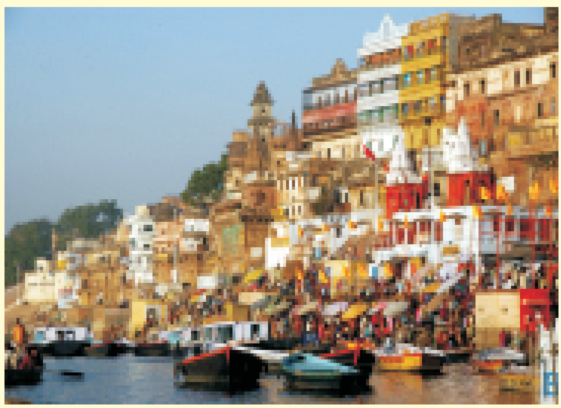

से तरना या पार होना चाहते हैं तो केवल परोपकार के यज्ञीय सद्कर्मों के द्वारा ही हो सकते हैं। दुःखों से तारने वाले शुभ कर्मों की व्याख्या करते हुए सत्यार्थ प्रकाश के ११वें समुल्लास में देव दयानन्द लिखते हैं ''वेदादि शास्त्रों का पढ़ना-पढ़ाना, धर्मिक विद्वानों का संग, परोपकार, धर्मानुष्ठान, योगाभ्यास, निष्कपट, सत्यभाषण, सत्य का मानना, सत्य करना, ब्रह्मचर्य, आचार्य, अतिथि माता-पिता की सेवा, परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना, शान्ति जितेन्द्रियता, सुशीलता, धर्मयुक्त पुरुषार्थ, ज्ञान-विज्ञान आदि शुभ गुण कर्म दुःखों से तारने वाले होने से तीर्थ कहलाते हैं।

यजुर्वेद में तीर्थ की व्याख्या इस प्रकार से है -

नमस्तीर्थ्याय च ॥ यजुर्वेद १६/४२

जो वेदादि शास्त्र सत्य धर्म लक्षणों से युक्त हो उसको अन्नादि पदार्थ दे शिक्षा लेना तीर्थ कहलाता है ।

नदियों के किनारे पनपने वाली प्राचीन सभ्यताओं में पुरातन सनातन शिक्षा पद्धति के रूप में गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली थी जहाँ ब्रह्मचारी विद्यार्थी गुरुकुल में रहकर आचार्यों से शिक्षा ग्रहण करते थे शायद इसीलिए नदी किनारे ही कालान्तर में तीर्थों के नाम से जाने जाने लगे ।

इन गुरुकुल रूपी तीर्थों में विद्यार्थी विद्यादि शुभ गुणों, आर्य संस्कारों को ग्रहण कर सब सत्य विद्याओं का ज्ञान प्राप्त कर वेदादि शास्त्रों का अध्ययन कर पृथ्वी से ईश्वर पर्यन्त सभी पदार्थों का सत्य स्वरूप जान मान कर परोपकार करते हुए जीवन के लक्ष्य मोक्ष वा मुक्ति को प्राप्त करने का प्रयास करते थे । कालान्तर में जब सभी प्रक्रियाओं का अपने तुच्छ स्वार्थों के कारण पोंगे पंडितों ने सरलीकरण किया तो नदियों में स्नान कर पाप निवारण करते हुए मोक्ष तक सीमित कर दिया । नदियों में स्नान करने से हम शारीरिक स्वच्छता की आशा तो कर सकते हैं परन्तु मन बुद्धि आत्मा की शुचिता तो केवल वेदादि शास्त्रों के अध्ययन अनुकरण विद्या से ही आ सकती है। नदियों तालाबों में सामूहिक स्नान से पाप निवृत्ति तो नहीं हो सकती परन्तु संक्रामक रोग फैलने का खतरा जरूर होता है ।

इससे यह निर्विवाद रूप से सिद्ध होता है कि दुःख सागर से तारने वाले यज्ञीय परोपकार के कार्यों का नाम ही तीर्थ है ना कि स्थान या नदी विशेष का नाम।

- ५०२ जी एच २७ सैक्टर २०

❑❑❑

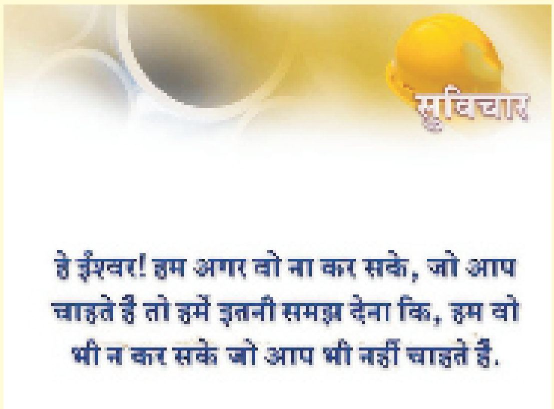

धर्म : एक वैज्ञानिक विश्लेषण

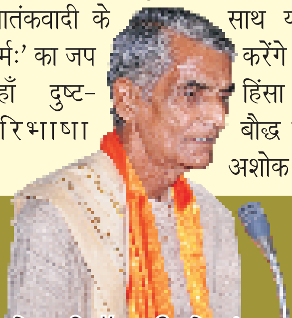

वेदाचार्य डॉ. रघुवीर वेदालंकार

धर्म की प्रशंसा एवं आवश्यकता के विषय में बहुत कुछ कहा गया है। यहाँ उसका पिष्टपेषण अभीष्ट नहीं है, केवल संक्षेप में ही कुछ कह देना पर्याप्त होगा। यहाँ हमारा उद्देश्य धर्म के स्वरूप पर विचार करना है। एक एव सुहृद् धर्मो निधनेऽप्यनुयाति यः। धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः, आदि उक्तियाँ इस विषय में हैं। अथर्ववेद में तो पृथिवी को ही 'धर्मणा धृता' धर्म के द्वारा स्थित कहा गया है। एक कवि ने तो धर्म से रहित व्यक्ति को पशुओं के तुल्य ही माना है। इस प्रकार धर्म की आवश्यकता तो निर्विवाद है। प्रश्न है कि धर्म का स्वरूप क्या है?

इस विषय में भी धर्म के अनेक लक्षण एवं परिभाषाएँ दी गई हैं। कहीं **'अहिंसा परमो धर्मः'** कहकर अहिंसा को भी परम धर्म मान लिया गया तो कहीं पर **'नास्ति सत्यात् परो धर्मः नानृतात् पातकं परम्'** कह कर सत्य को ही परम धर्म कहा गया है। प्रश्न है कि क्या सर्वत्र, सर्वदा अहिंसा एवं सत्य का पालन किया जा सकता है? यदि किया ही जाए तो क्या इसमें अपना तथा अन्य जनों का जीवन सुरक्षित रह सकता है? चोर, डाकू, लुटेरे, आतंकवादी के साथ यदि आप 'अहिंसा परमो धर्मः' का जप करेंगे तो जीवन नहीं बचेगा। वहाँ दुष्ट-हिंसा अनिवार्य है। वस्तुतः यह परिभाषा बौद्ध काल की है, जबकि सम्राट् अशोक ने युद्ध का मार्ग छोड़कर अहिंसा का मार्ग अपना लिया था। जैनमत में भी इसका अधिक प्रचार किया गया। अहिंसा का मार्ग अपना कर यह देश बहुत कमजोर हो गया, शौर्य समाप्त हो गया। कुछ लोगों को सम्भवतः यह भी भ्रम है कि अहिंसा के बल पर ही भारत को स्वतंत्रता मिली। ऐसा कहना स्वतंत्रता की बलिवेदी पर हँस-हँस कर अपने प्राणों की आहुति देने वाले वीरों का अपमान है। अंग्रेजों के दिलों को इन वीरों के बलिदानों ने, नेताजी की आजाद हिन्द फौज ने तथा भारतीय जनता के विप्लव ने दहला दिया था। व्यक्तिगत, सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन में दुष्टों की हिंसा अनिवार्य है, हाँ, निरपराध की हिंसा नहीं करनी चाहिए, यही धर्म है।

सत्य का भी यही हाल है। यह भी सार्वकालिक एवं सार्वदेशिक धर्म नहीं बन सकता। प्रसिद्ध उदाहरण है कि आपके सामने से कोई गाय गई है तथा थोड़ी देर में वधिक आकर पूछता है कि गाय किधर गई, तो क्या यहाँ पर आपका सत्य बोलना धर्म है? कदापि नहीं। ऐसे में मिथ्या बोलकर ही गाय की रक्षा की जा सकती है, यही धर्म है। धर्म वह है, जिससे प्राणियों की रक्षा हो। इसीलिए योग दर्शन के भाष्यकार व्यास जी कहते हैं कि कही हुई वाणी से यदि प्राणियों का विनाश होता है तो वह सत्य नहीं मानी जायेगी। इस प्रकार सिद्धान्त निश्चित हुआ है कि स्वार्थ वश या किसी को धोखा देने के लिए मिथ्या नहीं बोलना चाहिए। प्राणियों के उपाकारार्थ मिथ्या बोलना भी धर्म है।

मनु ने भी धर्म के लक्षण कहे हैं। इनमें वेद, स्मृति, सदाचार तथा अपने आत्मा को जो प्रिय लगे ये चार धर्म के साक्षात् लक्षण माने गए हैं, इनमें वेद तथा स्मृति धर्म के लक्षण नहीं, अपितु उद्गम स्थान हैं। वेदों तथा स्मृतियों में जो कुछ कहा गया है,सज्जनों का आचरण तथा आत्मप्रिय कार्य धर्म हैं, किन्तु यह तो तलाश करना पड़ेगा कि वहाँ पर क्या कहा गया है?

मनु ने ही अन्यत्र धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय विनिग्रह आदि को धर्म का लक्षण कहा है। यह परिभाषा भी अपूर्ण है। इसलिए स्वामी दयानन्द ने इन लक्षणों में अहिंसा को भी जोड़ दिया। इसी प्रकार इनमें अन्य गुणों को भी जोड़ा जा सकता है। अक्रोध को भी यहाँ पर धर्म का लक्षण माना गया है, किन्तु यह अनिवार्य प्रतीत नहीं होता। क्षमा को भी यहाँ धर्म का लक्षण कहा है, किन्तु सर्वत्र इसका पालन भी नहीं किया जा सकता न ही करना चाहिए। यथा, पृथिवीराज ने मुहम्मद गौरी को सोलह बार क्षमा कर दिया। यह धर्म था या अधर्म?यह विचारणीय है। यह सरासर अधर्म था। विधर्मी शत्रु को क्षमा करने का अर्थ अपना विनाश है। अपना ही नहीं, अपितु प्रजा का भी विनाश है, क्योंकि पृथ्वीराज तो राजा था। धर्म यही था कि अन्यायी विधर्मी को कब्जे में आने पर प्रथम बार में ही समाप्त कर दिया जाए। नीतिकार कहते हैं कि शत्रु तथा अग्नि को प्रकट होते ही नष्ट कर देना चाहिए, अन्यथा ये दोनों ही बढ़ते ही चले जायेंगे तथा विनाशक बन जायेंगे। तरावडी के प्रथम युद्ध में पृथिवीराज के भाई ने मुहम्मद गौरी को घायल करके छोड़ दिया, जान से नहीं मारा। इसी गौरी ने पृथिवीराज के पकड़ में आते ही उसकी आँखें फुड़वा दीं तथा बन्दी बनाकर अपने देश ले गया। क्षत्रियों में शरणागत की रक्षा को भी धर्म माना गया है, किन्तु यदि कोई दुष्ट इसका लाभ उठाकर छलकपटपूर्वक राज्य में आ जाता है तो उस अन्यायी को अभयदान देना धर्म नहीं कहा जा सकता, क्योंकि अवसर पाते ही वह दुष्ट आपके जीवन को संकट में डाल देगा। हाँ, कोई निष्कपट भाव से शरण में आ रहा है तो उसकी रक्षा करना धर्म है। गौर देश के शासक अलाउद्दीन के भय से गजनी का शासक मीर वहाँ से भागकर भारत आ गया। पृथिवीराज चौहान ने

उसको शरण दे दी। यह महमूद गजनवी का वंशज था, इसे शरण देने से गौरी पृथिवीराज का शत्रु बन गया।

शास्त्रों में धर्म की जो परिभाषाएँ दी गई हैं, उनमें दो-तीन पर यहाँ विचार किया जाता है। वैशेषिक दर्शन में कहा गया है- **यतोऽभ्युदयनिश्रेयस् सिद्धिः स धर्मः।** अर्थात् जिससे इस लोक तथा मोक्ष की सिद्धि हो, वही धर्म है। कुछ स्पष्टता नहीं है इसमें कि वह धर्म नामक तत्त्व है क्या? दूसरी बात इस लोक की सिद्धि सफलता का क्या अर्थ है? लोक में धन को ही सर्वप्रमुख माना जाता है। धन के आधार पर ही सुख प्राप्ति होती है। यह भी स्पष्ट है कि धन तो ऐसे स्रोतों से भी प्राप्त होता है जिन्हें हम निन्दनीय समझते हैं तो धर्म क्या हुआ? इसका उत्तर यह है कि वहाँ पर अभ्युदय= अभि+उदय शब्द पढ़ा है। इसका अर्थ है सभी प्रकार की उन्नति। जीवन का लक्ष्य सर्वाङ्गीण उन्नति है, केवल धन प्राप्ति नहीं। केवल धन प्राप्ति ही जीवन की सफलता नहीं है। सुख के साथ शान्ति भी जीवन का लक्ष्य है। यह धन के आधार पर नहीं मिल सकती। जिन कार्यों के द्वारा तन-मन प्रसन्न रहे, बुद्धि शान्त रहे तथा आत्मा आनन्द युक्त हो, वे ही धर्म हैं। अन्याय से कमाए गये धन में ये गुण नहीं हो सकते। मोक्ष की सिद्धि भी साथ जुड़ी है। यह तो सत्य, न्याय, अहिंसा, अस्तेय, यज्ञ, ईश्वरभक्ति आदि के आधार पर ही संभव है। ऐसे गुण ही संसार में शान्ति स्थापित कर सकते हैं। इसीलिए महाभारतकार ने कहा **'धर्मो धारयते प्रजाः'।** धर्म ही प्रजा को धारण करता है, विनाश से बचाता है। व्यास जी ने धर्म का एक व्यावहारिक लक्षण दिया है कि **'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्'** अर्थात् जो कार्य आपको अपने लिए अच्छे न लगें, उन्हें दूसरों के लिए मत करो, यही धर्म सर्वस्व है।

यह तो धर्म का एक व्यावहारिक एवं दार्शनिक स्वरूप हुआ, किन्तु संसार में सभी मनुष्यों ने तो इसे इस रूप में ग्रहण नहीं किया हुआ। प्रश्न है कि जो व्यक्ति धर्म के किसी भी स्वरूप या परिभाषा को मानने को तैयार नहीं, उनके सामने आपका यह धर्म क्या करेगा। वे तो ऐसे धर्म तथा उसके धारक धार्मिक व्यक्ति को अपना शिकार बनाने में कोई कसर उठाकर नहीं रखते। उन खूंख्वार, छली, कपटी, हत्यारों के सामने आपका यह सत्य, न्याय, दया आदि गुणयुक्त धर्म निरर्थक है। उनके साथ तो दूसरा धर्म ही कार्य करेगा, और वह है -**'शठे शाठ्यं समाचरेत्।'** दुष्ट के साथ सज्जनता का व्यवहार आत्मघातक है। जैसे भी हो, वैसे ही उस दुष्ट का नाश करना ही वहाँ पर धर्म है। महाभारत में कीचड़ में रथ का पहिया फँस जाने पर जब निहत्थे कर्ण ने अर्जुन को धर्म की दुहाई देकर बाण छोड़ने से रोकना चाहा तो श्री कृष्ण ने इसका उत्तर यही कह कर दिया था कि चक्रव्यूह में फँस जाने पर अकेले अभिमन्यु को कई महारथियों द्वारा मारा जाने पर तुम्हारा धर्म कहाँ चला गया था? इसलिए लोक धर्म यह है **'यस्मिन् यथा वर्तते यो मनुष्य स्तस्मिँस्तथा वर्तितव्यं स धर्मः।'** अर्थात् जो व्यक्ति जैसा व्यवहार करता है, उसके प्रति वैसा ही व्यवहार करना धर्म है। इसलिए श्री कृष्ण ने उस अवस्था में निहत्थे कर्ण का वध अर्जुन से करा दिया। महाकवि भारवि कहते हैं कि जो लोग छली कपटी, दुष्टों के साथ वैसा ही व्यवहार नहीं करते वे पराजय को प्राप्त होते हैं। इस लोक धर्म का पालन न करने के कारण हमें पराजय का मुँह भी देखना पड़ा तथा अपना धर्म भी गँवाना पड़ा। यथा अलाउद्दीन खिलजी को दर्पण में रानी पद्मिनी का दर्शन कराकर जब चित्तौड़ के राजा खिलजी को विदा करने उसके साथ गये तो खिलजी ने धोखे से उन्हें बन्दी बना लिया। यदि खिलजी के भावों को भाँपकर स्वयं पहले ही उस पर आक्रमण कर देते तो वह दुर्दिन न देखना पड़ता। सोमनाथ पर आक्रमण के समय महमूद गजनवी ने अपनी सेना के आगे ३०० गायें खड़ी कर दीं। धर्मभीरू हिन्दू सैनिक उन पर प्रहार न कर सके। फलस्वरूप मुस्लिम सेना जीत गई बाद में उन्हीं

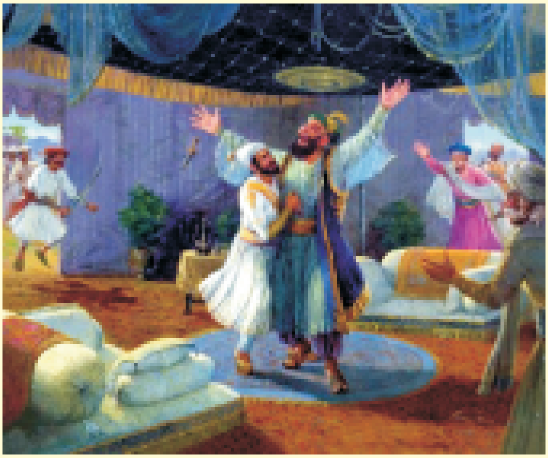

मुस्लिमों ने अनेक गउओं तथा गौ भक्तों को यमलोक पहुँचा दिया। यदि उस समय कुछ गायों का बलिदान देकर गोघातक मुस्लिम सेना को परास्त कर दिया होता तो हिन्दू धर्म तथा गोवंश की रक्षा हो जाती। इसी धर्म को **'शठे शाठ्यं समाचरेत्' 'कण्टकः कण्टकेनैव शाम्यति' 'जैसे को तैसा'** कहा गया है। जिन्होंने इसका आश्रय लिया, वे विजयी रहे हैं। शिवाजी ने, सन्धि के बहाने बुलाकर शिवाजी को मारने की अफजल खाँ की योजना को जानकर उससे पहले ही अफजल खाँ को मार दिया था।

संसार में जो हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, पारसी आदि मजहब या सम्प्रदाय धर्म के नाम से जाने जाते हैं, यहाँ धर्म का कुछ अन्य ही स्वरूप है। ये धर्म अपनी कुछ विशेष मान्यताओं के आधार टिके हैं। इन्हें देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि ऐसा लोकधर्म श्रद्धा, सेवा तथा शक्ति के आधार पर फैला है। शक्ति चाहे तलवार की रही हो, धन की रही हो या राज्य की रही हो। जिसे भी यह शक्ति मिली, वही धर्म संसार में फैला तथा उसने इसी शक्ति के आधार पर अन्यों को कुचल दिया। मुस्लिम आक्रमणकारियों ने शक्ति के आधार पर हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया, परिणामस्वरूप पूरे भारत में मुस्लिम मत फैल गया, अन्यथा विदेशों से तो थोड़े ही मुसलमान यहाँ आये थे। इसी प्रकार ईसाईयों ने भी तलवार के बल पर ईसाई मत फैलाया है, इसके साथ ही धन का बल भी इसके साथ है। विदेशों से अरबों रुपया ईसाईयों एवं मुसलमानों के पास इनके संगठनों को सहायता के रूप में प्रतिवर्ष आता है जिसके आधार पर हिन्दुओं का धर्म परिवर्तन किया जाता है। धर्मान्तरण होते ही उन व्यक्तियों की निष्ठा भी बदल जाती है। इस धर्म के आगे आपके तप, त्याग, सत्य, अहिंसा आदि कुछ काम नहीं आयेंगे। इनका प्रतिरोध तो उन जैसे उपाय अपना कर ही किया जा सकता है। हिन्दू ऐसा नहीं कर रहे हैं, इसलिए यह धर्म सिमटता तथा मिटता चला जा रहा है।

श्रद्धा भक्ति के तथा विश्वास के आधार पर भी धर्म फैलता है। भारत में पौराणिक धर्म फैलने का कारण यह श्रद्धा भक्ति तथा विश्वास ही तो है कि मन्दिर में जाकर मूर्ति पर पुष्प आदि चढ़ाकर जो माँगो वह मिल जाता है। वैदिक धर्म ऐसा नहीं मानता, इसलिए इसके मानने वालों की संख्या भी कम है। राज्य की शक्ति के आधार पर भी धर्म फैलता है। बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार में सम्राट अशोक का बहुत योगदान रहा है। इसी प्रकार आदि शंकराचार्य ने सुधन्वा राजा की सहायता से वैदिक धर्म का प्रचार तथा बौद्ध धर्म का पराभव किया था। यहाँ पर मनु का, व्यास जी का बतलाया धर्म काम नहीं आयेगा।

सेवा एवं श्रद्धा-भक्ति के आधार पर फैलने वाले किसी भी अवैदिक मत को आप अन्ध श्रद्धा का फल कह कर छोड़ नहीं सकते। अन्धी ही सही, श्रद्धा तो वहाँ है। इसके अभाव में सत्य वैदिक धर्म भी नहीं फैल सकता। अन्धे व्यक्ति नेत्रों वालों से भी अधिक कार्य कर देते हैं। यही हाल अन्ध श्रद्धा का है।

इस प्रकार हमें धर्म के शास्त्रीय एवं दार्शनिक स्वरूप के साथ-साथ उसके लोक प्रचलित स्वरूप तथा प्रभाव को भी देखना होगा। अवैदिक धर्म जिन साधनों के आधार पर फैलता है, उनके मूल में जाकर ही उसका प्रतिरोध किया जा सकता है, अन्यथा नहीं। सत्य वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए धर्म के नाम चलने वाले पाखण्ड, बर्बरता एवं छद्म सेवा भाव का वास्तविक स्वरूप जनता के सामने रखना होगा, अन्यथा अन्धविश्वास में जकड़ी जनता तो इसे ही वास्तविक समझती रहेगी।

धर्म के नाम शीश कटाने पर भी गर्व किया जाता है। यह भी नासमझी की बात है। धर्म के नाम शीश कटाने नहीं चाहिए, अपितु अत्याचारी, अन्यायी अधर्मी का शीश काट लेना चाहिए। धर्म तभी जीवित रहेगा। शीश कटाने से धर्म का आधार नष्ट होने से धर्म भी नष्ट हो जायेगा। मुस्लिम शासन से अपना सतीत्व बचाने के लिए रानी पद्मिनी सहित असंख्य राजपूतानियों का जौहर इतिहास की धरोहर है। इस पर हमारा सिर उन वीरांगनाओं के आगे सादर प्रणत तो है, किन्तु यदि वे स्वयं चिता में न जलकर हाथों में तलवारें लेकर शत्रु पर भूखी बाघिन की भाँति टूट पड़तीं तो असंख्य शत्रुओं को मौत के घाट उतार सकती थीं। रानियाँ युद्ध विद्या में निपुण होती थीं। पराजय की स्थिति में एक दूसरे की छाती में कटार भोंक कर या स्वयं ही अपना सिर कलम करके भी कीर्तिमान स्थापित किया जा सकता था। यह कार्य चिता में जीवित जलने से तो लाख गुणा श्रेष्ठ होता। बिना युद्ध किये मरना कायरता है।

❑❑❑

बी-२६६, सरस्वती विहार
नई दिल्ली-११००३४

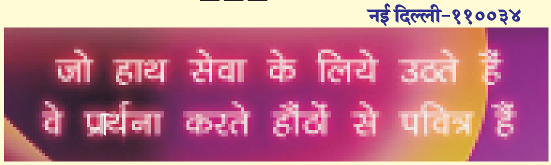

कुमारिल भट्ट और ऋषि दयानन्द

कुन्दनलाल आर्य, चूनियाँवाला

तकरीबन २३०० वर्ष हुए जब कि सारे भारतवर्ष में बुद्ध धर्म फैल चुका था। तमाम राजा महाराजा बुद्ध धर्म स्वीकार कर चुके थे। और बुद्ध धर्म के न मानने वालों पर तरह-तरह की सख्तियाँ की जा रही थीं। और मामूली अपराधों के बदले गैर बौद्धों को सख्त सजाएँ दी जाती थीं, जिसमें आम जनता डर के मारे बौद्ध धर्म स्वीकार करती चली जा रही थी, कि कुमारिल भट्ट का जन्म हुआ। विद्या में निपुण होकर एक दिन वे कौशाम्बी के शहर में आये और गंगा-स्नान के लिए प्रातः ही गंगा तट पर पहुँच गये, तो किसी स्त्री की आवाज उनके कानों में पहुँची **''किं करोमि कुत्र गच्छामि को वेदानुद्धारिष्यति।''** क्या करूँ, कहाँ जाऊँ कौन वेदों की रक्षा करेगा? कुमारिल भट्ट यह शब्द सुनकर खड़े हो गये, इधर-उधर देखा, कोई नजर नहीं आया तो ऊँची आवाज में कहने लगे- ''ऐ देवी तू मत समझ कि तेरी आवाज नष्ट हो गई है। तेरी आवाज ने मुझे घोर निद्रा से जागृत कर दिया है और मैं अब जी जान से वैदिक धर्म का प्रचार करूँगा। उस दिन से कुमारिल भट्ट मैदान में निकल खड़े हुए और बौद्ध सिद्धान्तों की धज्जियाँ उड़ाने लगे। बौद्ध पण्डितों को जब कुमारिल भट्ट की इन सरगर्मियों का पता चला, तो उन्होंने महाराज हर्षवर्धन के पास उनकी शिकायत की, और कुमारिल भट्ट को गद्दार बना कर उनको संगीन सजा देने की माँग की। परन्तु महाराज हर्षवर्धन बड़े विद्वान् थे, उन्होंने बहुत विचार कर यह फैसला किया कि बात किसी शास्त्रार्थ के द्वारा ही तय होनी चाहिए। अतः महाराज की मन्शा के अनुकूल प्रयागराज में एक बहुत बड़े शास्त्रार्थ का आयोजन किया गया। यह शास्त्रार्थ महाराज हर्षवर्धन की अध्यक्षता में हुआ। एक तरफ कुमारिल भट्ट अकेले थे, और दूसरी तरफ बौद्ध भिक्षु बहुत बड़ी संख्या में थे। बौद्ध भिक्षुओं ने बड़ा शोर गुल मचा दिया और कुमारिल भट्ट की एक न चलने दी। उसकी दलीलों को हँसी मजाक में उड़ा कर उसको शर्मिन्दा करते रहे। और अन्त में बौद्ध लोगों ने महाराज हर्षवर्धन की मौजूदगी में कुमारिल भट्ट की पराजय की घोषणा कर दी। जिसका कुमारिल भट्ट ने अपना बहुत बड़ा अपमान समझा और इस अपमान के कारण demoralise हो गया, और इस नित्य प्रति की अपकीर्ति से बचने के लिए दीवाली के रोज चिता बनाकर ओं नाम का जाप करते हुए भस्म हो गये। अचानक उसी दिन स्वामी शंकराचार्य मौके पर पहुँच गये, और उन्होंने कुमारिल भट्ट को आत्म हत्या करने को मना भी किया परन्तु कुमारिल भट्ट न माने, उन्होंने शंकर स्वामी से केवल यही कहा कि मुझे प्रसन्नता है कि मेरे बाद बौद्धों के पाखण्ड को समाप्त करने वाला कोई मनुष्य बाकी है। जहाँ मुझे इस बात पर प्रसन्नता है, वहाँ मुझे इस बात का दुःख भी है कि हमारे प्राचीन शास्त्रों में इस कदर मिलावट कर दी गई है कि झूठ और सत्य के मध्य अन्तर ही नहीं रहा। और इसके कारण सारे देश में फूट ही फूट है। हर कोई अपना डेढ़ ईंट का मन्दिर अलग बनाने में लगा हुआ है, इसलिए जब तक सारे देश में जागृति नहीं आती और ईश्वर विश्वास पैदा नहीं होता देश का भाग्य कदापि बदल नहीं सकता। मैंने लोगों को वैदिक धर्म का रास्ता दिखलाने का प्रयत्न किया, मगर अफसोस कि लोगों ने मुझे मिलवर्तन न दिया और यही उत्तम समझता हूँ कि नित्य प्रति की अपकीर्ति से मुक्ति प्राप्त करने के लिए स्वयं को समाप्त कर दूँ। ताकि नित्य प्रति की परेशानी जाती रहे, यह कुमारिल के अन्तिम शब्द थे जो उन्होंने मायूसी की हालत में आत्म हत्या करते समय शंकर स्वामी से कहे थे। और

कुमारिल भट्ट की तरह महर्षि दयानन्द जी को भी यह ज्ञान हो गया था कि हमारे प्राचीन शास्त्रों में इस कदर मिलावट हो चुकी है कि सत्य झूठ की पहचान ही नहीं हो सकती। और वह भी इसी परिणाम पर पहुँचे थे, कि इसी मिलावट के कारण देश में फूट पड़ी हुई थी। अतः उन्होंने एक ऐसा सिद्धान्त कायम कर लिया जिसमें सत्य तथा झूठ की आसानी से परख हो सके, उन्होंने घोषणा कर दी कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। और वेद ही स्वतः प्रमाण है। वेदानुकूल होने से ही अन्य शास्त्रों का प्रमाण है, जहाँ और जिस स्थान पर उनमें वेद के प्रतिकूल कोई श्लोक या बात है वह प्रमाणित नहीं है। इसी सिद्धान्त की बिना पर उन्होंने

दिग्विजय प्राप्त की। किसी को उनके सामने ठहरने की हिम्मत न हुई। और यह बात काशी शास्त्रार्थ में बिल्कुल सिद्ध हो गई कि जब काशी के राजा ने काशी के पण्डितों को कहा कि एक दण्डी संन्यासी आए हैं, और वे मूर्तिपूजा का खण्डन करते हैं। और आपसे शास्त्रार्थ करना चाहते हैं तो सब पण्डितों ने एक जबां होकर राजा को कहा कि वे तो वेद को ही स्वतः प्रमाण मानते हैं, और हमने वेद को देखा ही नहीं तो राजा बड़ा हैरान होकर उनसे कहने लगा कि फिर इतनी देर आप लोग हमें धोखे में ही रखते रहे कि मूर्तिपूजा वेदानुकूल है। तब राजा ने कहा कि शास्त्रार्थ तो अवश्य होना चाहिए और जिस तरह भी हो उसको शिकस्त देनी चाहिए तो पण्डितों ने कहा कि हम को १५ दिन की मोहलत मिल जाय तो हम वेद को कुछ कुछ देख तो लें। महाराज ने महर्षि दयानन्द को कहा कि शास्त्रार्थ १५ दिन के बाद हो, परन्तु अवश्य हो। महाराज ने कहा अवश्य होगा। और फिर १५ दिन काशी के सब बड़े-बड़े पण्डितों ने खूब तैयारी की। उधर लंगोट बन्द संन्यासी, और इधर सारी काशी के समृद्ध पण्डित। अतः १६ नवम्बर १८६९ मंगलवार सायं चार बजे शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ। महाराजा हर्षवर्धन की भाँति महाराजा काशी इसके प्रधान बने, अनुमान से ५०००० मनुष्यों की हाजरी में शास्त्रार्थ आरम्भ हुआ, और काशी के सभी प्रसिद्ध पण्डित जिनमें स्वामी विशुद्धानन्द, बालशास्त्री, ताराचरण राजपण्डित, प० शिवसहाय, माधवाचार्य आदि प्रमुख थे, अकेले लंगोट बन्द दयानन्द के सामने आए और दयानन्द के एक एक प्रश्न से निरुत्तर होकर बैठते गये, परन्तु महाराज काशी और सब पण्डित येन केन प्रकारेण स्वामी दयानन्द की पराजय की घोषणा करना चाहते थे। इसलिए जब शास्त्रार्थ करते शाम के सात बज गये, और काफी अन्धेरा हो गया तो काशी के पण्डितों ने एक फटा पुराना पत्रा स्वामी जी के सम्मुख रख कर कहा कि इस में पुराण पढ़ने की आज्ञा है। गोया अपने मुँह से मूर्तिपूजा को न सिद्ध कर सकने का इकबाल करके अब पुराण की तरफ आये। और जब स्वामी जी अभी वह पत्रा धीमी लालटेन की रोशनी में देखने ही लगे थे, कि स्वामी विशुद्धानन्द और महाराज काशी उठकर खड़े हो गये, और ताली बजा दी कि दयानन्द हार गये, बस फिर क्या था इतनी बडी भीड़ में काशी के पण्डित ही नहीं, बल्कि पण्डितों के पालतू गुण्डे भी मौजूद थे, सब ने स्वामी जी पर ईंट, पत्थर, गोबर, जूते फेंकने शुरु कर दिये, और भरपूर अपमान करने लगे, परन्तु कोतवाल जगन्नाथ ने महर्षि के सामने खड़ा होकर उनको बचा लिया, वरना पण्डित और गुण्डे तो उनको ठिकाने लगाने की साजिश करके ही आए थे। कुमरिल भट्ट की तरह ऋषि दयानन्द जी को इस शास्त्रार्थ में घोर अपमान सहन करना पड़ा, परन्तु महर्षि कुमरिल भट्ट की तरह Demoralise न हुए। और इस दिलशकनी और बदनामी के कारण न सिर्फ यह कि कुमरिल भट्ट की तरह आत्महत्या को न तैयार हुए बल्कि इस शास्त्रार्थ के बाद पूरे चार महीने उस काशी नगरी में रहकर लगातार जोरदार खण्डन मूर्तिपूजा का करते रहे। और बार-बार पण्डितों को शास्त्रार्थ के लिए ललकारते रहे, परन्तु किसी भी पण्डित के अन्दर महर्षि के सामने आने की हिम्मत न हुई। स्वामी जी ने अपने इस घोर अपमान को अपमान न समझा था। फिर भी स्वामी जी काशी में इसके बाद छः बार आये। और हर समय पण्डितों को न सिर्फ जबानी बल्कि विज्ञापनों द्वारा जो उनके द्वारों पर लगा दिये जाते थे शास्त्रार्थ के लिए आह्वान करते रहे परन्तु जब तक महर्षि जीते रहे किसी भी पण्डित की जुर्रत न हुई कि उनके सामने बात भी कर सके। जिस अपमान को सहन न करके बदनामी के भय से कुमरिल भट्ट ने दीवाली के दिन चिता बनाकर आत्महत्या कर ली। उसी अपमान बल्कि उससे भी अधिक अपमानों को सहन करते हुए महर्षि सारे भारतवर्ष में घूम घूम कर वैदिक धर्म का प्रचार करते रहे, और सन् १८८३ में दीवाली के दिन ही, "ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो, तैंने अच्छी लीला की" और ओ३म् का जाप करते हुए प्राण त्याग दिये (बलिदान दे दिया)। अगर महर्षि भी कुमरिल भट्ट की तरह अपमान को सहन न कर पाते और आत्म हत्या कर लेते तो इतना महान् कार्य जो महर्षि ने इस शास्त्रार्थ के बाद करके देश के अन्दर जागृति पैदा की और प्राचीन ग्रन्थों के अन्दर मिलावटों को देखकर जो यह सिद्धान्त सिद्ध किया कि वेद स्वतः प्रमाण हैं, कायम करके देश में एकता की लहर पैदा कर दी, यह कैसे हो सकता था। वैदिक धर्म का उद्धार करने का यत्न कुमरिल भट्ट ने भी किया, और महर्षि दयानन्द जी ने भी परन्तु कुमरिल भट्ट अपमान न सहन कर असफल हुए। और महर्षि अपमान सहन कर अपने मिशन में पूरी तरह सफलता प्राप्त कर पाये। शायर के शब्दों में इस प्रकार है-

पैग़ाम वेद पाक दे के, ख़ासो आम को। दुनिया से भी गये तो दीवाली की शाम को॥

❑❑❑

(पूर्ण पुरुष का विचित्र जीवन 'से साभार')

'सत्य और अहिंसा में प्रमुख कौन?

डॉ. जितेन्द्र कुमार

सत्य और अहिंसा में प्रधान कौन?यह शीर्षक हमें सोचने के लिए विवश करता है कि क्या इन दोनों में प्रथम और द्वितीय भी हो सकते हैं?वैसे तो दोनों का महत्व अपने-अपने स्थान पर अत्यन्त उपादेय है। दोनों अद्वितीय हैं। दोनों में से परस्पर कोई भी एक दूसरे का स्थान नहीं ले सकता है। दोनों अतुलनीय हैं। दोनों परस्पर पूरक भी हैं। दोनों की महत्ता जीवन में सदैव दिखाई देती है। फिर भी शास्त्रों एवं विद्वानों ने जहाँ अहिंसा को परम धर्म 'अहिंसा परमो धर्मः' माना है वहीं सत्य को ईश्वर'सत्यं ज्ञानम् अनन्तं ब्रह्म' कहा है। सत्य को विजय का वरदान और मूल स्रोत 'सत्यमेव जयते' कहा गया है।

योगदर्शन के प्रणेता महर्षि पतंजलि यम और नियमों में अहिंसा को ग्रहण करते हैं, तदनन्तर सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह इत्यादि को। अहिंसा की व्याख्या करते हुए महर्षि व्यास न केवल अहिंसा को प्रथम कहते हैं अपितु अन्य सभी सत्यादि यमों एवं नियमों को अहिंसा के आश्रित ही स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में अहिंसा के लिए सत्यादि व्रतों और नियमों का पालन करना अभीष्ट है। सत्यादि यमों के आचरण से अहिंसा परिपुष्ट होती है। इन सबका उद्देश्य अहिंसा को सिद्ध करना ही बताया है। सत्य आदि शेष यम और सब नियम अहिंसा मूलक हैं। अहिंसा उन सबका मूल है। इन सबके मध्य मुख्य अंग है। अपने अंशदान से अहिंसा को पूर्णरूप में सिद्ध करने के लिए ही इनका प्रतिपादन है। अहिंसा का शुद्ध, स्वच्छ रूप सर्वांश में निखर सके इसी प्रयोजन के लिए सत्य आदि यम के अंग तथा नियमों का उपादान किया गया है। यम नियमों में अहिंसा के प्राधान्य को प्रकट करने लिए आचार्यों ने पंचशिख के एक संदर्भ को उद्धृत किया है-

स खल्वयं ब्राह्मणो यथा-यथा
व्रतानि बहूनि समादित्सते तथा-तथा
प्रमादकृतेभ्यो हिंसानिदानेभ्यो निवर्त्त
मानस्तोमेवावदातरूपामहिंसा करोति॥

निश्चित ही यह ब्रह्म प्राप्ति के लिए पथ का पथिक जैसे-जैसे बहुत से व्रत-नियमों को आचरण में लाने के लिए उत्सुक एवं प्रगतिशील रहता है, वैसे-वैसे यह प्रमाद से किए गए हिंसा के कारणों से दूर रहता हुआ। उस शुद्ध, स्वच्छ, निर्दोष अहिंसा को प्राप्त कर लेता है। आत्मा में अहिंसा की प्रतिष्ठा होने पर योगी का संसार में कोई निरोधी नहीं रहता है। उस दशा में योगी सबकी अनुकूलता में निर्बाध अपने पथ पर बढ़ता हुआ सफलता प्राप्त कर लेता है।

संसार तथा साहित्य में सत्य और अहिंसा की महत्ता को प्रकट करने वाले वाक्य प्राप्त होते हैं। परन्तु पतंजलि ऋषि अहिंसा को प्रथम स्वीकार करते हैं। ऋषि पारद्रष्टा होता है, दूर द्रष्टा होता है। सहसा किसी बात को कहने में संकोच भी करता है। अतः निश्चित रूप से ऋषि ने अपने मन में कोई न कोई गम्भीर रहस्य रखकर ही अहिंसा को प्रधानता की है। ऋषि की उस दृष्टि को ही यहाँ समझना अभिप्रेत है।

सत्य एक भावात्मक सत्ता है। इस भावात्मक सत्ता को प्रकट करने के लिए ही भाषा की अपरिहार्य रूप से आवश्यकता है। भाषा भावों की संवाहिका है। सत्य भाव को अभिव्यक्ति प्रदान करने लिए हिंसित भाषा का प्रयोग सर्वथा अनुपयुक्त ही होगा, अर्थ का अनर्थ करने वाला होगा, सत्य भाव को ही मिथ्या बनाने वाला होगा। इसलिए सत्य को प्रकट करने के लिए अहिंसित भाषा की अनिवार्य रूप से आवश्यकता है। अतः सत्य और अहिंसा में अहिंसा का प्रयोग प्रथम है.. .प्रधान है। सत्य हिंसित भी हो सकता है। उसे अहिंसित बनाकर प्रयोग करना ही प्रिय सत्य की ओर संकेत है। मनुस्मृति का निम्न श्लोक इस प्रसंग में बहुत प्रसिद्ध है।

सत्यं ब्रूयात प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयात् एष धर्म सनातनः ॥

अर्थात् सत्य बोलना चाहिए परन्तु प्रिय सत्य बोलना चाहिए। अप्रिय सत्य नहीं बोलना चाहिए तथा प्रिय झूठ भी नहीं बोलना चाहिए। यह मनीषियों द्वारा प्रतिपादित सनातन धर्म है। उक्त श्लोक में तीन प्रकार से एक ही बात को सम्पुष्ट करते हुए कहा गया है। सत्य बोलें परन्तु प्रिय अर्थात् अहिंसित सत्य ही बोलें। यहाँ सत्य बोलने पर जितना बल दिया गया है उतना ही बल प्रिय बनाकर सत्य बोलने पर दिया गया है। द्वितीय वाक्य में अप्रिय सत्य न बोलने का निर्देश यह संकेत करता है कि मौन नहीं रहना है अपितु बोलना सत्य ही है । सत्य बोलने का प्रतिवाद नहीं है प्रत्युत अप्रिय सत्य का अर्थात् हिंसित सत्य के प्रयोग का परित्याग या प्रतिषेध है। इसका अभिप्राय भी यही हुआ है

कि अहिंसित सत्य के प्रयोग पर ही बल दिया गया है। तृतीय चरण में यह न समझ लिया जाय कि प्रिय झूठ बोलने की तात्पयार्थ से स्वीकृति या समर्थन मिल गया है अतः प्रिय झूठ भी न बोले ऐसा कहकर प्रिय सत्य की अभिव्यक्ति पर ही संपूर्ण बल दिया गया है, और इसको सनातन धर्म भी कहा है।

कटु सत्य की, कठोर सत्य के प्रयोग की प्रायः निन्दा वर्णित है परन्तु प्रिय सत्य की सर्वत्र प्रशंसा एवं स्तुति की गई है। प्रिय सत्य का प्रयोग शब्दों का अहिंसित तथा उपयुक्त संचय चाहता है। इसके अभाव में सत्य सर्वत्र, सदैव सहसा विजयी नहीं होता। सत्य का प्रयोक्ता सत्य के दम्भ में अनेक असावधानियों के कारण कठिनाइयों में पड़ जाता है। सत्य अनेक बार दम्भी भी होता है उसे अहिंसित अर्थात् विनयशील प्रिय बनाकर ही प्रयोक्ता सफलता की आशा कर सकता है। इसलिए सत्य को अहिंसा के प्रयोग की सतत अपेक्षा रहती है।

दम्भी (हिंसित) सत्य पराजय को भी प्राप्त होता है। असत्य दम्भ नहीं करता। असत्य अधिकांश रूप से शालीन एवं विनयी दिखाई देता है। तभी तो प्रस्तुति के आधार पर असत्य भी विजय को प्राप्त होता है। वह असत्य की विजय नहीं है प्रत्युत अहिंसा जन्य प्रस्तुति की विजय है, प्रकारान्तर से अहिंसा की ही विजय है। जिस प्रकार असत्य को अन्य अनेक प्रकार की प्रविधियों से जिताया जाता है उसमें निर्विवादित रूप से अहिंसा का समग्र दृष्टि से योगदान रहता है उसी प्रकार सत्य को भी अहिंसा रूपी शस्त्र से ही जिताया जा सकता है। अन्यथा सत्य स्वयं स्वतः नहीं जीत पाता है। सत्य को भी परिश्रमपूर्वक अहिंसा के प्रयोग के साथ ही जिताना पड़ता है। कुछ लोग सत्य को विजयी बनाने के लिए असत्य का आश्रय लेने का भी पक्ष लेते हैं। असत्य के आश्रय से सत्य अविश्वसनीय हो जाता है। जब कि सत्य तो होता ही वह है जो विश्वास बनाये और उसमें वृद्धि करे। अतः असत्य के आश्रय का अनुमोदन अथवा समर्थन कभी नहीं किया जा सकता है। अहिंसा का आश्रय करने से सत्य विश्वसनीय भी रहता है और विजयी भी होता है। अहिंसित सत्य के प्रति जन समर्थन भी प्राप्त होता है तथा सत्य प्रेरणा भी देता है।

सत्य वह सोना है जो अहिंसा रूपी हीरे की मणि का सम्पर्क पाकर निखर उठता है, कुन्दन बन जाता है, अपनी चमक बढ़ा लेता है, कान्ति और दीप्ति से आलोकित हो जाता है। वर्तमान युग में गाँधी जी इसके साक्षात् उदाहरण और प्रमाण हैं। गाँधी जी की सफलता का यही एक मात्र मूल मंत्र है। वे सत्य के प्रयोग को अहिंसात्मक रूप देकर व्यवहार में लाते थे यही कारण था कि गाँधी जी के साथ करोड़ों लोग समर्थन में भी आ जाते थे। गाँधीजी ने सत्य के लिए अहिंसित प्रयोग से जन समुदाय में चेतना का संचार किया। लोग उनके साथ मरने के लिए खड़े हो गये, पिटने के लिए तैयार हो गये। मारना आसान है। पीटना सरल है, परन्तु मरना कठिन है, पिटना साहस का कार्य है। कायर पिटते नहीं और पीटते भी नहीं परन्तु किसी असत्य और अन्याय के विरोध में महाशक्ति से पिटना,सोद्देश्य विरोध प्रकट करना कायरता नहीं, वीरता है। सहिष्णुता साहस है किन्तु सत्य के लिए। सहिष्णुता ही अहिंसा है। गाँधी जी अंग्रेजों से भी सहानुभूति पूर्ण व्यवहार के पक्षपाती थे किन्तु उनकी और सत्य सिद्धान्तों से समझौता न करना अपने स्थान पर है। हम प्रायः इसमें भेद करने में उदार हो जाते हैं और अशुद्धि कर ही जाते हैं। कोई बात एक बार भी धीरे से सुदृढ़ तरीके से कही जा सकती है यह कमजोरी नहीं है अपितु अहिंसा है। लोग इसको अनेक बार अपने पक्ष में देखते हैं यह उनकी भूल है। कोई बात जोर से ही कही जाय एवं बार बार कही जाए तभी सुदृढ़ होगी, ऐसी भ्रान्त धारणा अपास्त कर लेनी चाहिए। यही गाँधी की विचारधारा (अहिंसा पर आधरित सत्य) सभी को साथ लेकर चलने में सफल हुई। जैसे विनय विहीन विद्या विनाश का पथ प्रशस्त करती है वैसे ही अहिंसा रहित सत्य विपर्यय का कारक होता है। 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' वाक्य की व्याख्या भी अहिंसा मूलक दिखाई देती है। शिवात्मक, कल्याणात्मक, अहिंसात्मक सत्य ही सुन्दर है। जो सत्य तार्किक शिव है, कल्याणकारी है, अनवद्य है, अहिंसित है, वही शिव है, जो सत्य के लिए है और वही सुन्दर है जो सत्य तथा शिव है। अभिप्राय हुआ अहिंसात्मक सत्य ही सुन्दर है। सुन्दरता सबको प्रिय है। सर्वप्रियता के लिए अहिंसक सत्य की ही आवश्यकता है। अहिंसक असत्य भी अन्ततः हिंसक ही होता है। अतः अहिंसक असत्य का भी त्याग करना अभिप्रेत है। लिखने और बोलने में तुलना करें तो लिखते समय व्यक्ति अधिक अहिंसा का आश्रय ग्रहण करता है। जब कोई बोलते हुए हिंसित शब्दों का प्रयोग करता है तब उसे यही कहा जाता है कि क्या तुम इसको लिख सकते हो? वह लिखने से बचता है। क्योंकि प्रमाण के रूप में पकड़ में

आता है और वह स्वयं भी उस लिखे हुए का समर्थन तथा अनुमोदन नहीं कर पाता है। अतः वर्तमान में भी अधिकांश जन समुदाय लिखने में शब्दों का चयन उचित और अहिंसित ही करने में विश्वास व्यक्त करता दिखाई देता है। जब कभी भी लड़ाई -झगड़ा होता है तो वह हिंसित भाषा के प्रयोग से प्रारम्भ होता है और अवसान अहिंसित भाषा के प्रयोग पर ही निर्भर करता है। इसलिए अहिंसा ही प्रधान तत्त्व है।

सत्य को अभिव्यक्ति प्रदान करने में शब्दों की दरिद्रता का नितान्त अभाव ही अहिंसा है। अच्छे सवार को यदि चुनने का अधिकार दिया जाए वह ऊँची नस्ल का और उत्तम घोड़ा ही चुनेगा घटिया नहीं। आज के युग में मर्सिडीज कार का ही चुनाव होगा मारूति कार का नहीं। उसी प्रकार शब्दों का उत्तम, अनवद्य, अहिंसित प्रयोग ही सत्य की प्रतिष्ठा एवं महिमा को बढ़ाता है। अहिंसा सत्य का स्वरूपाधायक तत्त्व भी है और उत्कर्षाधायक तत्त्व भी है। स्वरूपाधायक तत्त्व इसलिए कि शब्द संचय से सत्य के उत्कर्ष में वृद्धि करता हुआ सफल बनाता है। इसलिए अहिंसा सत्य का स्वरूपाधायक और उत्कर्षाधायक तत्त्व है।

जब भी सत्य पराजित होता है तो परिश्रम के अभाव में, निरभिमानता के अभाव में, उत्तम प्रस्तुति के अभाव में, अहिंसित प्रयोग के अभाव में। अन्यथा कोई कारण नहीं, कोई प्रश्न ही नहीं होता है कि सत्य परास्त हो जाय। सत्य की शक्ति अमित है, परन्तु उच्च स्वर उसकी शक्ति को क्षीण कर देता है। शब्दों के अनुपयुक्त प्रयोग उसकी धार को नष्ट कर देते हैं। उद्वेग पूर्वक कहे गये शब्द सत्य को सम्यग् रूप से प्रकट नहीं होने देते। सत्य अभिव्यक्त होते हुए भी अपनी छटा नहीं बिखेर पाता और छटपटाता रह जाता है। किसी कोने से सिसकियाँ भरता रहता है। उस समय असत्य अट्टाहास करता है। असत्य सत्य को मुँह दिखाता है। उसे अनेक प्रकार से चिढ़ाता है। यही हिंसा है। यही सत्य हिंसित है। यहाँ पर अहिंसा के अभाव में सत्य हिंसित हुआ है, क्रन्दन कर रहा है। आँसू बहा रहा है। इसके विपरीत संयत स्वर, शिष्ट शब्द और सन्तुलित भाषा सत्य की धार को तीक्ष्ण करती है, न केवल सम्पूर्ण रूप से सत्य को अभिव्यक्त करती है अपितु उसमें कालजयी स्वरूप का आधान भी करती है। सत्य को सफलता के कदम चूमने की ओर अग्रसर करती है। सत्य को सम्पूर्ण रूप से तथा सर्वांश में उद्घाटित करती है। सत्य से सफलता का समन्वय कराती है। यही अहिंसा है। परिणाम अहिंसा नहीं है। पद्धति अहिंसा है और पद्धति ही प्रधान है, प्रथम है। सत्य परिणाम को दिशा प्रदान करता है तथा अहिंसा सत्य को परिणाम तक पहुँचाने से उच्चावच (ऊबड़ खाबड़) मार्ग से और भटकने से बचाती है। अहिंसा से सत्य स्थापित किया जाता है, प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है, प्रेरणा प्रदान करता है, लोगों से जोड़ने का कार्य करता है।

वैदिक वाक्य जगत् की परिभाषा करते हुए कहता है कि-'अग्निषोमात्मक जगत्' यह संसार अग्नि और सोमात्मक है। सूर्य और चन्द्र, अग्नि और जल, सत्य और अहिंसा जगत् को स्थित करने वाले पदार्थ हैं। जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश चन्द्रमा में सक्रमित होकर आह्लादक, शीतल, सरस सुधा और सदश सोम वर्षक, सेवन करने योग्य हो जाता है उसी प्रकार सत्य अहिंसा के साथ सर्वजन समर्थित एवं सर्वस्वीकार्य गुण के कारण व्यापक और सार्वजनीन हो जाता है। सत्य को सर्वग्राही बनाना ही होगा। सत्य की सत्ता को जन-जन के हृदयों में स्थापित करने के लिए अहिंसा का आश्रय ही एक मात्र संजीवनी औषधि है। सत्य की प्रतिष्ठा का आधारभूत मूल तत्त्व है। सत्य की अभिव्यक्ति का सक्षम, समर्थ और उत्तम साधन है। सत्य की प्रेरणा है। सत्य का प्राण है। सत्य की आत्मा है। सत्य की कान्ति को बढ़ाने वाला निर्विकल्पक तत्त्व है। सत्य का स्वरूपधायक सार है। उत्कर्ष का प्रणेता है।

- राजकीय महाविद्यालय शाहपुरा भीलवाड़ा

❑❑❑

शाबाश वन्दना

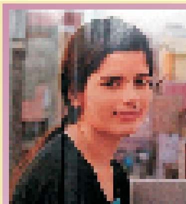

गुरुकुल चोटीपुरा में प्राप्त संस्कारों ने दिखाया अपना असर। हरियाणा के नसरूल्लागढ़ गांव में श्रीयुत महिपाल सिंह जी के घर में ४ अप्रेल १९८९ को जन्मी वन्दना जब बड़ी हुई तो उसकी एक ही चाह थी कि उसे पढ़ना है और जीवन में आगे बढ़ना है। परिवार की पृष्ठभूमि में लड़कियों को पढ़ने नहीं भेजा जाता था परन्तु वन्दना की जिद पर पहले गाँव में और फिर छठीं कक्षा से मुरादाबाद के पास स्थित गुरुकुल चोटीपुरा में वन्दना ने १२ वीं कक्षा तक पढ़ाई की। इन छः वर्षों में गुरुकुल में जो एकात्म साधना का अभ्यास हुआ उसकी बदौलत २०१२ की सिविल सर्विस परीक्षा में हिन्दी माध्यम से प्रथम स्थान और कुल मिलाकर आठवाँ स्थान प्राप्त किया। गुरुकुलीय शिक्षा पद्धति को संसार के समक्ष सही साबित करते हुए वन्दना ने जो सफलता हासिल की है प्रशंसनीय है। उन्हें उनके उज्ज्वल भविष्य के लिए अनेकशः शुभकामनाएँ। आचार्य सुकामा जी व सुमेधा जी को भी बधाई।

– अशोक आर्य

सत्यार्थप्रकाश प्रचार सहयोग निधि

•सत्यार्थ प्रकाश से उत्कृष्ट कोई ग्रन्थ नहीं जिसके प्रकाशन में आपकी पुण्य दान राशि का प्रयोग हो। सत्यार्थ प्रकाश प्रचार हेतु,कम राशि में अधिक संख्या में यह महान् ग्रन्थ जन-जन के हाथों में पहुँच सके,एतदर्थ निम्न योजना निर्मित की गई है:-

•सत्यार्थ प्रकाश (मानक संस्करण) की द्वितीय आवृत्ति छपने में है। कृपया निम्नानुसार सहयोग कर लागत मूल्य से आधी कीमत में सत्यार्थ प्रकाश का दिया जाना सुनिश्चित करें। आपके द्वारा सहयोगार्थ प्रदान की गई राशि के समक्ष अंकित प्रतियों पर आपका अथवा आपके किसी प्रियजन का चित्र ग्रन्थ पर दिया जावेगा।

राशि	प्रतियों की संख्या	राशि	प्रतियों की संख्या
एक लाख रु.	दस हजार	७५०००	७५००
५००००	५०००	२५०००	२५००
१००००	१०००	इससे स्वल्प राशि देने वाले दानवीरों के नाम ग्रन्थ में अंकित किये जायेंगे।	

आपका दान आयकर अधिनियम की धारा ८० जी के अंतर्गत करमुक्त होगा। राशि न्यास के नाम ड्राफ्ट या चैक द्वारा भेजें अथवा यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, उदयपुर खाता क्रमांक ३१०१०२०१००४१५१८ में जमा कर सूचित करें।

निवेदक

भवानीदास आर्य — मंत्री-न्यास
भंवरलाल गर्ग — कार्यालय मंत्री
डॉ.अमृत लाल तापड़िया — उपमंत्री-न्यास

सत्यार्थप्रकाश मानक संस्करण की कतिपय विशेषताएँ-

➲ धर्मार्य सभा के प्रधान आचार्य विशुद्धानन्द जी मिश्र के नेतृत्व में दस विद्वानों की समिति द्वारा तैयार।

➲ पाठभेद की समस्या का सदैव के लिए निराकरण। मुद्रण भूलों का निराकरण कर परिशिष्ट में आधार की जानकारी भी।

➲ मानक संस्करण का प्रत्येक पृष्ठ उसी शब्द से प्रारम्भ व समाप्त है जैसा कि मूल सत्यार्थ प्रकाश (१८८४) में है।

➲ मूल सत्यार्थ प्रकाश (१८८४) सदैव के लिए पाठक के समक्ष उपस्थित रहेगा।

➲ सुन्दर गेटअप "५.६X९.०" पृष्ठ ६५०, वजन ६०० ग्राम, पेपर बैक।

घाटे की पूर्ति पूर्ववत् दानदाताओं के सहयोग से ही संभव होगी।
आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि सत्यार्थ प्रकाश प्रेमी इस कार्य में आगे आवेंगे।

अब मात्र आधी कीमत में ₹ ४०

३५०० रु. सैंकड़ा

शीघ्र मंगवाएँ

अनेक विशेषताओं से युक्त १८८४ के मूल सत्यार्थ प्रकाश के सर्वाधिक नजदीक, तत्कालीन शैली का संरक्षण, मुद्रण अशुद्धियों से रहित सत्यार्थ प्रकाश (मानक संस्करण) अवश्य खरीदें।

मात्र ४० ₹

प्राप्ति स्थल

श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, उदयपुर - ३१३००१

• अधिकारी वर्ग से विशेष निवेदन-कृपया अपनी संस्था को 'सत्यार्थ-सौरभ' परिवार से अवश्य जोड़े।

• विद्वानों से निवेदन है कि वे केवल सत्यार्थ-सौरभ के लिये लिखे गये अपने संक्षिप्त, सारगर्भित लेख प्रेषित करने की कृपा करें।

बाल वाटिका

किसी समय एक किसान एक गाँव में रहता था उसके पास एक घोड़ा एवं एक बकरी व अन्य जानवर थे। एक दिन उसका घोड़ा बीमार हो गया और उसने पशु चिकित्सक को बुलाया। पशु चिकित्सक ने शंका व्यक्त की कि तुम्हारे घोड़े को वायरल इन्फेक्शन(संक्रामक रोग) है। मैं इसको अभी तीन दिन के लिए दवा देता हूँ। मैं तीन दिन बाद फिर आऊँगा और तब भी अगर यह ठीक नहीं हुआ तो हमें इसे मारना पड़ेगा ताकि अन्य पशुओं को संक्रमण से बचाया जा सके।

इस समय बकरी भी पास खड़े होकर के यह वार्तालाप सुन रही थी अगले दिन किसान ने घोड़े को दवाई दी और वहाँ से चला गया तब बकरी घोड़े के पास आई और बोली- 'मेरे मित्र ताकतवर बनो उठो अगर तुम नहीं उठे तो वे लोग तुम्हें सदा के लिए सुला देंगे।' दूसरे दिन फिर घोड़े को दवा दी गई और किसान चला गया। किसान के जाने के बाद बकरी फिर घोड़े के पास आई और बोली 'देखो दोस्त! आओ उठकर खड़े हो जाओ। तुम उठो तो सही मैं तुम्हारी मदद करूँगी। शाबाश उठो। एक दो तीन। परन्तु घोड़ा नहीं उठ पाया। बकरी ने कहा कि कोशिश करके खड़े हो वरना वे तुम्हें मार देंगे। तीसरे दिन किसान और डॉक्टर दोनों आये और पशु चिकित्सक ने घोड़े का परीक्षण किया और बोला दुर्भाग्य है हमें कल इसे खत्म कर देना होगा वरना तुम्हारे दूसरे पशुओं में यह संक्रमण पहुँच जायेगा। उन दोनों के जाने के बाद बकरी फिर घोड़े के पास आई और बोली मेरे दोस्त। स्थिति यह है कि या तो अभी अथवा कभी नहीं। इसलिए आओ खड़े हो जाओ, साहस करो, आओ उठो। शाबाश हाँ उठो शाबाश एक दो तीन, बहुत अच्छे बहुत अच्छे । अब थोड़ा तेजी से उठो । शाबाश अब दौड़ो, शाबास जोर से दौड़ो। अरे तुम तो चैम्पियन निकले।' जो घोड़ा अभी तक मृतप्रायः पड़ा था अचानक उठा और तेजी के साथ दौड़ने लगा। इतने में ही किसान आया और उसने अपने घोड़े को दौड़ते देखकर कहा कि चमत्कार हो गया। मेरा घोड़ा ठीक हो गया। इस खुशी में मैं एक बहुत अच्छी दावत दूँगा और उस दावत में आमंत्रितों को खिलाने के लिए किसान ने उस बकरी को मार डाला। पाठक समझ गये होंगे कि उपरोक्त कथानक में घोड़े की सफलता नहीं बल्कि बकरी के उत्साह दिलाने के प्रयासों की सफलता थी। परन्तु जैसाकि अक्सर होता है किसान ने भी इस बात को नहीं पहचाना। किसी सफलता के पीछे बहुत से ऐसे लोगों का भी हाथ होता है जिन्हें हम पहचान नहीं पाते।

□□□

संकलन-श्रीमती शारदा गुप्ता, उदयपुर

समाचार

हनुमान जयंती पर वृहद् यज्ञ एवं प्रवचन

झाबुआ जिले के ग्राम नवापाड़ा, कालीरूण्ड़ी तहसील थांदला में वृहत् यज्ञ एवं प्रवचन का कार्यक्रम का आयोजन आर्य प्रचारक श्री खेमचन्द्र आर्य की प्रेरणा से ग्राम के श्री देवलाजी द्वारा निर्मित हनुमान मन्दिर पर हुआ। यज्ञ में आये जोड़ों से आहुती दिलाई गयीं। इसके साथ ही आसपास के ग्रामों के आये अनेक नरनारियों ने गायत्री मंत्र से आहुती दीं। श्री खेमचन्द्र आर्य के प्रभाव से ग्राम के सरपंच श्री ज्योतिभाई डामोर एवं उनका परिवार पूर्व में जो ईसाई मतावलम्बी था, को हिन्दू धर्म स्वीकार कराया। रतलाम से आर्य समाज के मंत्री श्री राजेन्द्र बाबू गुप्त तथा कार्यकारिणी सदस्य श्री रेवती प्रसादगुप्त ने भाग लिया।

-आर्य समाज रतलाम

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, (सासनी) हाथरस में प्रवेश प्रारम्भ

पता-पो.कन्या गुरुकुल, पिन- २०४१०४, जिला-हाथरस (उ.प्र.)। शिक्षा प्ले ग्रुप से लेकर वेदालंकार/विद्यालंकार(बी.ए.) तक, प्रथमा (८) से लेकर आचार्य (एम.ए.) तक, विद्याविनोद (समकक्ष इन्टर) तक विज्ञान वर्ग की भी शिक्षा। प्रयाग संगीत समिति, गायन, वादन में प्रभाकर (बी.ए.) तक आई.टी.आई.-कोपा (कम्प्युटर), कटाई सिलाई ट्रेड की एन.सी.वी.टी. द्वारा मान्य व्यावसायिक शिक्षा। प्ले ग्रुप से समकक्ष बी.ए. तक अन्य विषयों के साथ-साथ हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी तीनों भाषायें। प्रातः सायं यज्ञ, योगासन, जूडो कराटे। सुरम्य, प्राकृतिक, रमणीक, विस्तृत भूखण्ड में कन्याओं को संस्कारवान् करने का यत्न। छात्रावास सुविधा, सुरक्षा। गुरुकुल आगरा-अलीगढ़ राष्ट्रीय मार्ग संख्या ९३ पर सासनी-हाथरस के मध्य स्थित। १५० रु. भेजकर नियमावली मंगावें।

Website: www.sites.google.com/site/kgurukulsasni

-आचार्या कमला स्नातिका, मुख्याधिष्ठात्री,

दूरभाष- ०५७२२-२२०११६, मो.-०९८९७४७९६१६, ०९२५८०४०११६, ०८००६३४०५८३

अथर्ववेद काव्यार्थ (प्रथम भाग) का लोकार्पण

वैदिक साधना आश्रम तपोवन, देहरादून के पाँच दिवसीय ग्रीष्मोत्सव के अंतिम दिन, ५ मई २०१३ को यजुर्वेद तथा सामवेद दोनों के सम्पूर्ण मंत्रो का हिन्दी कविता में अर्थ कर चुकने वाले, संसार भर के अकेले कवि वीरेन्द्र कुमार राजपूत के अथर्ववेद काव्यार्थ (प्रथम भाग) ग्रन्थ का लोकार्पण स्वामी दिव्यानन्द सरस्वती जी द्वारा किया गया। इस अवसर पर डॉ. अन्नपूर्णा, डॉ. सुखदा सोलंकी, डॉ. बुद्धिराजा, नरेन्द्र मैत्रेय, आचार्य आशीष, डॉ. कैलाश कर्मठ, अविराज माथुर, सुकृति माथुर आदि उपस्थित थे। उल्लेखनीय है कि श्री राजपूत को अभी हाल में गुगनराय एजूकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी बाहल द्वारा पुरस्कृत किया गया है।

-उत्तम मुनि, संचालक

चरित्र निर्माण शिविर

वेद प्रचार मंडल जिला फर्रूखाबाद के प्रधान आचार्य चन्द्रदेव शास्त्री के पावन सानिध्य में जनपदीय आर्य वीर दल फर्रूखाबाद द्वारा युवाओं के उज्ज्वल चरित्र निर्माण हेतु दिनांक १७ जून से २३ जून २०१३ तक सात दिवसीय आर्य वीर दल प्रशिक्षण शिविर का आयोजन जनपद फर्रूखाबाद में किया गया। उपरोक्त शिविर पूर्णतया आवासीय एवं निशुल्क था शिविरार्थी नित्य उपयोगी वस्तु चादर पी टी शू, खाकी हाफ पेंट सफेद बनियान आदि साथ लाये थे। आयोजन अति भव्य, प्रेरणादायक तथा सफल रहा।

- संदीप कुमार आर्य, फर्रूखाबाद

परिणय सूत्र में बंधे चि.मनोज एवं सौ.का. अरुणा

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि प्रभु कृपा से न्यास के अतीव सहयोगी मित्तल परिवार में भाई श्री सुरेश मित्तल के सुपुत्र चि.मनोज का शुभ विवाह सौ.का.अरुणा के साथ पूर्णतः वैदिक रीति से दिनांक २८ मई २०१३ को हर्षोल्लास के वातावरण में सम्पन्न हुआ। श्री सुरेश जी मित्तल, महर्षि दयानन्द उच्च माध्यमिक विद्यालय, फतहनगर के माध्यम से नवीन प्रकल्पों का सृजन कर वैदिक संस्कृति के प्रचार प्रसार में अपना संपूर्ण योगदान दे रहे हैं। न्यास तथा सत्यार्थ सौरभ परिवार की ओर से सभी परिवारीजनों को अनेकशः बधाई एवं शुभकामनाएँ।

-भवानीदास आर्य, मंत्री न्यास

आर्य समाज, जिला सभा, कोटा द्वारा नशामुक्ति अभियान

तम्बाकू विरोधी अभियान के अंतर्गत आर्य समाज जिलासभा कोटा द्वारा विज्ञाननगर चौराहे के निकट मजदूरों के बीच एक सभा का आयोजन कर उन्हें तम्बाकू व इसके उत्पादों के सेवन तथा अन्य प्रकार के सभी नशों जैसे शराब, स्मैक, अफीम इत्यादि से होने वाली गंभीर समस्याओं एवं उनसे उत्पन्न हानियों से परिचित कराया जिसमें बड़ी संख्या में स्त्री व पुरुषों ने आर्य समाज के संदेश को ध्यान से सुना। कार्यक्रम की अध्यक्षता आर्य समाज जिला प्रधान श्री अर्जुन देव चड्ढ़ा ने की। -अरविन्द पाण्डेय, प्रचार मंत्री

दानवीर हरिनारायण जी सोनी (कोलकाता) नहीं रहे

श्री हरिनारायण जी, आर्य समाज बीकानेर के प्रति स्नेह रखते थे। आपने महर्षि कपिल मुनि की तपोभूमि श्री कोलायत में अपनी भूमि के अग्र भाग में से आर्य समाज महर्षि दयानन्द बीकानेर को कुल पचास हजार वर्गफीट भूमि दान कर इतिहास रचा था। आप जैसे महानुभावों के लिए ही कहा गया है कि 'उर्णाभद्रा पृथिवी दक्षिणावते' अर्थात् दानी के लिए मातृभूमि मुलायम ऊन की तरह सुखदायी होती है।

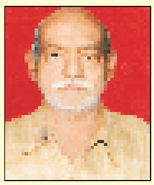

श्री हरिनारायण जी सोनी का मात्र साठ साल की आयु में दिवंगत हो जाना आर्य समाज व समाज के लिए अपूरणीय क्षति है। हम परमपिता परमात्मा से दिवंगत आत्मा को अपनी ममतामयी गोद में स्थान प्रदान करने एवं शोकाकुल परिवार को धैर्य प्रदान करने हेतु प्रार्थना करते हैं।

- महेश सोनी, बीकानेर

ब्रह्मचक्र एवं ३३ कोटि के देवता कलेण्डर का विमोचन

आर्य समाज, रावतभाटा में दिनांक ११ मई को उक्त कलेण्डर का विमोचन समारोह सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री अर्जुनदेव चड्ढ़ा, प्रधान, जिला आर्य प्रतिनिधि सभा कोटा ने की। उल्लेखनीय है कि इस सुन्दर कलेण्डर का कल्पना चित्रण स्वाध्यायशील विद्वान् श्री ओमप्रकाश आर्य ने किया है तथा श्री मोहन लाल जी ने अपने व्यय से इन कलैण्डरों को प्रकाशित करवाया है। ये सभी साधुवाद के पात्र हैं।

-रेशम पाल सिंह, प्रधान

तेज बुखार में सुनें राग मेघ मल्हार

तेज बुखार में राग मेघ मल्हार सुनाना चाहिए। दिन में २०-२० मिनट तीन बार संगीत सुनने से फायदा होगा। राग जौनपुरी आसावरी काफी और हिंडोल रागों को सुनने से शरीर की वात प्रकृति संतुलित होती है तथा खून की कमी में राग जय जयवंती, हाई ब्लड प्रेशर में राग हिंडोल एवं लो ब्लड प्रेशर में राग भूपाली सुनना चाहिए। यह जानकारी न्यू भोपालपुरा स्थित सेंट्रल पब्लिक सीनियर सैकंडरी स्कूल में सोमवार को लगाए गए निःशुल्क संगीत चिकित्सा शिविर में जयपुर के संगीत चिकित्सक प्रतापसिंह चौहान ने दी। उन्होंने बताया कि विभिन्न रोगों के उपचार में संगीत चिकित्सा उपयोगी है। कब्ज, आन्त्र रोग, मूत्र संक्रमण, मरोड़ आदि रोगों में राग जौनपुरी, भय, हृदय विकार में राग पूरिया, सिर दर्द, माइग्रेन, मस्तिष्क एकाग्रता में दरबारी कान्हड़ा, पेट दर्द में पूरिया कल्याण, नींद न आना, सर्दी जुकाम में राग केदार, एसिडिटी में मारवा, हृदय रोग में भैरवी तथा डायबिटीज के लिए राग जौनपुरी उपयोगी है। उन्होंने बताया कि नाड़ी शोधन के लिए अ, उ, ओ, ओं, मू इन अक्षरों को एक ही स्वर में उच्चारण करना चाहिए।

(साभार-दैनिक भास्कर)

बाघों का मन्दिर

क्या आपने कभी बाघों के किसी मन्दिर के बारे में देखा या सुना है। हम

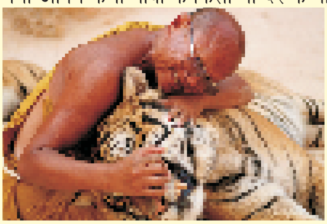

बताते हैं कि इन्सान और खतरनाक वन्य प्राणी भी गलबहियाँ कर सकते हैं। थाईलैण्ड में घने जंगलों से घिरा कंचनबूरी एक प्रदेश है। इस प्रांत के बियाबान जंगल में वर्ष १९९४ में एक बौद्ध मन्दिर और अभयारण्य बनाया गया। १९९९ में यहाँ पहली बार एक बाघ शावक का आगमन हुआ। इसकी माँ को शिकारियों ने मार डाला। पता नहीं इस जगह में क्या खास था कि एक शावक के आने के बाद यहाँ बाघों के आने का सिलसिला शुरू हुआ जो अब तक जारी है। वर्तमान में इसकी संख्या करीब १०० है। कुछ सालों से बौद्ध मन्दिर के लोग इसे बाघों का मन्दिर कहने लगे। एक पक्ष यह भी - गाहे-बगाहे इस बौद्ध मन्दिर पर वन्य प्राणी प्रेमी संगठन जानवरों से अन्याय और अव्यवस्था संबंधी आरोप भी लगाते रहे हैं लेकिन यहाँ के प्रशासन का कहना है कि अगर आरोपों में सच्चाई होती तो क्या ये जानवर अपनी प्रकृति के अनुरूप हिंसक नहीं हो जाते।

'हमारी आँखों से अपनत्व पाते हैं और आपके लिए खतरनाक बाघ मेरे लिए शिशु समान हो जाता है।' - एक बौद्ध भिक्षु

मौलवी की पोल खोली तो मिली धमकियाँ

कश्मीर के बड़गाम जिले के धार्मिक केन्द्र में लड़कियों को 'पाक' करने के नाम पर उनसे दुष्कर्म करने वाले सूफी दरवेश का पर्दाफाश करने वाली पीड़ित लड़कियों को अब धमकियाँ मिल रहीं हैं। गुलजार अहमद नाम के इस पीर के समर्थक लड़कियों को धमकी भरे फोन कर रहे हैं। मामले की जाँच कर रहे बड़गाम एसपी उत्तम चन्द के मुताबिक, पुलिस के पास अभी इन नम्बरों की जानकारी नहीं है। जैसे ही धमकी भरे कॉल्स की डिटेल्स मिलेंगी, तुरन्त कार्रवाई करेंगे। गुलजार अपने धार्मिक केन्द्र में पढ़ने वाली लड़कियों को बहला-फुसला कर उनसे दुष्कर्म किया करता था। वह लड़कियों से कहता था कि इससे वह 'पाक' हो जाएँगी और दोजख की आग भी उन्हें जला नहीं पाएगी।

प्रतिस्वर

'सत्यार्थ सौरभ' अप्रैल- २०१३ का ताजा अंक मिला। एक नमूना है। कागज और छपाई अक्षरों की बनावट की तुलना किससे करें। स्वयं आकर्षक है। कोई पंक्ति अपठित नहीं है। प्रमाणों के साथ लेख छपे हैं। रामसेतु की कहानी 'जनज्ञान' मासिक में कभी पढ़ी थी, पुनः पढ़कर विचार करना ही पड़ा। ज्यादा आकर्षक लगा क्योंकि चित्र सहित सामग्री है। कोई कहे यह झूठी कहानी है कोई सुराग ही नहीं। प्रमाण चित्रों में बोलता है। जैसा सभी मानते हैं कि गंगा एक राष्ट्रीय सांस्कृतिक निधि घोषित की गई है। श्रीराम सेतु को भी वही दर्जा देना आवश्यक है। मगर एक विदेशी, सत्ता की मुखिया है। रोमन लिपि में लिखकर जनता को आकर्षित करने वाली के मन में सांस्कृतिक निधि का क्या महत्व है सभी जानते हैं। भारतीय हृदय वाले ही इसका महत्व समझ सकते हैं। शेष अन्य लेख भी प्रमाण सहित हैं, राममोहन राय और रानाडे जी, पश्चिमी विद्वानों में मार्टिन लूथर जी और लार्ड मेकाले आदि विशेषकर 'आर्य पुत्री पुष्पा कपिला हिंगोरानी ने रचा इतिहास' वाला लेख तो अतुलनीय है। 'सत्यार्थ सौरभ' मासिक द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती और सत्यार्थ प्रकाश का ही सौरभ प्रसारित हो रहा है। देश-विदेश तक लोगों तक पहुँच रहा है। आपका प्रयत्न सराहनीय है। चौबीसों घंटे प्रयास का ही फल है। आप बधाई के पात्र हैं, ईश्वर का आशीर्वाद आपको मिलता रहेगा। अगले अंक की प्रतिक्षा में।

- सोनालाल नेमधारी, मॉरीशस

आदरणीय पाटोदी साहब जी! सादर नमस्ते! सर्वप्रथम 'सत्यार्थ सौरभ पत्रिका के शुभारम्भ के लिए भूरिशः धन्यवाद। पत्रिका बहुत आकर्षक तथा विविध सामग्री से परिपूर्ण है। मेरी दृष्टि में इतनी आकर्षक पत्रिका आर्यसमाज के किसी संस्थान से प्रथम बार प्रकाशित हो रही है। आप सबका परिश्रम अत्यन्त श्लाघनीय है।

डॉ. प्रियम्बदा वेद भारती

न्यास के संस्थापक अध्यक्ष

पूज्य स्वामी तत्वबोध जी

की पुण्य स्मृति में भव्य

कवि सम्मेलन

२१ जुलाई २०१३

सान्निध्य - कविवर डॉ. सारस्वत मोहन मनीषी, दिल्ली

शोक संदेश — श्री सुरेन्द्र खराड़ी दिवंगत

उदयपुर रेन्ज के पुलिस महानिरीक्षक श्री टी.सी. डामोर एक कर्तव्यनिष्ठ अधिकारी हैं व स्वामी अग्निव्रत जी नैष्ठिक के कार्यों के अतीव प्रशंसक हैं। इसी क्रम में न्यास के प्रति भी अवर्णनीय आत्मीयता रखते हैं। आपके श्वसुर श्री सुरेन्द्र कुमार खराडी का दिनांक १-०६-२०१३ को एक संक्षिप्त बीमारी के पश्चात् दुःखद निधन हो गया। हम परमपिता परमात्मा से दिवंगत आत्मा को अपनी ममतामयी गोद में स्थान प्रदान करने एवं शोकाकुल परिवार को धैर्य प्रदान करने हेतु प्रार्थना करते हैं। -न्यास एवं सत्यार्थ सौरभ परिवार

दृष्टिकोण

शाश्वत है भारतीय संस्कृति और इसकी विरासत

कृष्ण कुमार यादव

गतांक से आगे ...

भारतीय ज्ञान परंपरा में संस्कृत को देववाणी कहा गया है। आखिर यूँ ही संस्कृत को इण्डो-यूरोपियन भाषाओं की जननी नहीं कहा जाता। भारतीय परिप्रेक्ष्य में संस्कृत मात्र भाषा की पर्याय नहीं है बल्कि भारत के स्वर्णिम अतीत और भारतीय संस्कृति की अद्‌भुत जीवंत अभिव्यक्ति की पर्याय है। संस्कृत में अध्यात्म, दर्शन, न्याय, संगीत, विज्ञान, गणित, तर्कशास्त्र, चिकित्सा, खगोल विद्या, अर्थशास्त्र, भौतिक विज्ञान, रसायन शास्त्र, वितरण विधि सभी सन्निहित हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद ३५१ में संविधानविदों ने भी सम्मिलित किया है कि- ''हिन्दी भाषा के शब्द भण्डार की मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए संघ उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।'' आई.टी. के इस आधुनिक दौर में पाश्चात्य वैज्ञानिक संस्कृत को कम्प्यूटर हेतु सम्पूर्णता की भाषा करार दे रहे हैं। उनकी मानें तो संस्कृत ही एकमात्र भाषा है जिसमें प्रत्येक शब्द का मूल होता है, एक भी शब्द निरर्थक नहीं होता। यह एक ऐसी भाषा है जिसमें जैसा अक्षर लिखा जाता है, वैसा ही उच्चारित किया जाता है। इसका कारण संस्कृत के व्याकरण का वैज्ञानिक और परिपूर्ण होना है। यह विडम्बना ही कही जायेगी कि हमें उस मैकाले को तो किताबों में रटाया जाता है जिसने ब्रिटिश भारत में अंग्रेजी को अनिवार्य बना दिया पर हमारे इतिहासविद्‌ उन जर्मन विद्वानों का जिक्र करने से चूक जाते हैं, जिन्होंने संस्कृत भाषा साहित्य को अपनी भाषा में अनुवाद करके अपने ज्ञान को और भी समृद्ध किया एवं वेदों से विज्ञान तक ले गये। जे. विल्किंसन व जार्ज फॉस्टर जैसे पाश्चात्य विद्वानों ने श्रीमद्‌भागवतगीता व अभिज्ञान शाकुन्तलम से प्रभावित होकर उनका अंग्रेजी में अनुवाद किया। एशियाटिक सोसायटी के संस्थापक विलियम जोन्स का वक्तव्य गौरतलब है कि- ''संस्कृत की संरचना ग्रीक और लैटिन से अधिक पूर्ण व परिष्कृत है। संस्कृत की संरचना सचमुच अद्‌भुत है।'' शायद यही कारण था कि १८६५ में एक राजाज्ञा के तहत्‌ लंदन की रॉयल एशियाटिक सोसायटी में संस्कृत-हिन्दी सहित भारत में मुद्रित सभी भाषाओं के अखबार, पत्रिकायें व पुस्तकें आने लगीं। आज भी अमेरिका संसद की 'लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस' भारत में छपी हर किताब को तीन महीने के भीतर वहाँ मँगवा लेती है।

स्वयं भारत सरकार के सूचना और प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में कम्प्यूटर पर इस्तेमाल लायक संस्कृत का कारपोरा (शब्दों का संग्रह) लगभग १४ साल पहले जर्मनी की मदद से पद्मभूषण पं. विद्यानिवास मिश्र के नेतृत्व में तैयार करवाया था। वस्तुतः कम्प्यूटर गणितीय बायनरी प्रणाली के आधार पर काम करता है। जिस गणित में तीन और पाँच अथवा पाँच और तीन जोड़ने पर उत्तर एक ही आता है। कम्प्यूटर के लिए इसी तरह की भाषा होनी चाहिए, जिसमें कर्ता और क्रिया के उलट फेर से खास फर्क न पड़ता हो। संस्कृत इसी तरह की भाषा है। इसीलिए इसे पूर्ण भाषा कहा जाता है। इसीलिए जर्मनी के वैज्ञानिकों ने संस्कृत को कम्प्यूटर की समर्थ भाषा के रूप में विकसित करने की संभावना का पता लगाया। १९८५ के दौरान अमेरिका के प्रसिद्ध नासा वैज्ञानिक रिक ब्रिग्स ने अपने आलेख 'संस्कृत एण्ड आर्टिफिसियल इण्टेलीजेन्स' में प्रतिपादन भी किया कि- ''संस्कृत एक अद्वितीय भाषा है। संस्कृत का प्रयोग प्राकृत होते हुए भी कृत्रिम भाषा के रूप में किया जा सकता है। यह अविश्वसनीय सा है कि मानव जाति के मध्य ३००० वर्षों तक बोल-चाल की सहज भाषा रही संस्कृत सभी दृष्टियों से परिपूर्ण थी एवं उत्कृष्ट संवाद की संवाहक थी।''

हमारे प्राचीन ग्रन्थ प्रकृति के साहचर्य को काफी महत्व देते रहे हैं एवं तदुनसार प्राकृतिक उपादानों को भी। फिर चाहे वह शिक्षा व्यवस्था की गुरुकुल प्रणाली हो या योग और आयुर्वेद। प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक शोपेनहावर ने इस ओर इंगित करते हुए लिखा था कि- ''भारत का वातायन हर बात में प्रकृति से संलग्न है और सनातन जीवन से स्पंदित है।'' आज यूरोपीय राष्ट्रों और अमेरिका तक में योग, आयुर्वेद, शाकाहार, प्राकृतिक चिकित्सा, यूनानी, होम्योपैथी और सिद्धा जैसे उपचार लोकप्रियता पा रहे हैं जबकि हम उन्हें बिसरा चुके हैं। हमें अपनी जड़ी-बूटियों, नीम, हल्दी और गोमूत्र का ख्याल तब आता है जब अन्य राष्ट्र उन्हें पेटेंट करवा लेते हैं। योग को हमने उपेक्षित करके छोड़ दिया पर जब वही 'योगा' बनकर आया तो हम उसके दीवाने बने बैठे हैं। कुछ समय पहले जब यह खबर आई कि भारतीय मूल के विक्रम चौधरी द्वारा अमेरिका में योग का पेटेंट कराने हेतु आवेदन किया गया है तो भारत को अपनी धरोहर का ख्याल आया और इसके बाद आरम्भ हुआ योग की संस्कृत भाषा की शब्दावली को विभिन्न विदेशी भाषाओं में अनुवाद करने का काम ताकि हम जोर देकर कह सकें कि योग विदेशों का नहीं बल्कि हमारी संस्कृति का अंग है। अब डिपार्टमेन्ट ऑफ आयुर्वेद, योग और नैचुरोपैथी, यूनानी, सिद्धा तथा होम्योपैथी के साथ मिलकर मोरारजी देसाई नेशनल इंस्टीट्यूट आफ योग एवं पुणे के केवल धाम ने मिलकर योग के विभिन्न आसनों और यौगिक क्रियाओं के संस्कृत नामों का अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मनी सहित पाँच भाषाओं में अनुवाद करने पर जोर

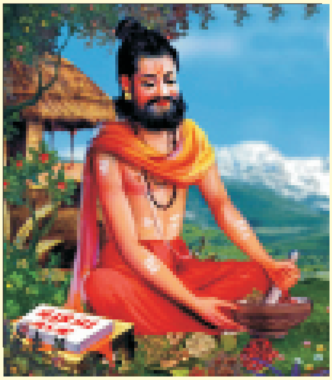

दिया।

आयुर्वेद मानव जाति को ज्ञात सबसे आरंभिक चिकित्सा विधि है। चरक ने २५०० वर्ष पहले आयुर्वेद का समेकन किया था। परम्परागत भारतीय चिकित्सा प्रणाली में कारगर तथा दोषरहित उपचार के तौर पर आयुर्वेद की महिमा ज्ञात है। अब तो भारत से परे इसकी बाकायदा प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में पढ़ाई हो रही है, जिसकी प्रेरणा मिली विश्व स्वास्थ्य संगठन के उस अध्ययन से जिसके अनुसार रियूमेटिक आर्थराइट्रिस के इलाज में आयुर्वेद पद्धति की पारम्परिक मान्यता एक बार पुनः सिद्ध हुई। यह अनायास ही नहीं है कि अमेरिका के सोलह मेडिकल कॉलेजों में आयुर्वेद पढ़ाने के लिए हाल ही में भारत से आयुर्वेदाचार्यों को भेजा गया है। ऑकड़ों पर गौर करें तो विदेशों में दिनों-ब-दिन आयुर्वेदिक दवाओं की माँग बढ़ती जा रही है। मौजूदा समय में प्रति वर्ष ३००० करोड़ रुपये की आयुर्वेदिक दवाइयाँ और इससे सम्बन्धित उत्पादों का भारत द्वारा विदेशों को निर्यात किया जा रहा है। अमेरिका, ब्रिटेन, स्पेन, रूस और आस्ट्रेलिया को किये जाने वाले निर्यात में औसतन २५ फीसदी की बढ़ोत्तरी हो रही है। ऐसे में आयुर्वेद की प्रासंगिकता स्वतः सिद्ध है।

हम उस देश के वासी हैं, जिसे कभी सोने की चिड़िया कहा जाता था। विदेशी आक्रमणों और अंग्रेजी शासन ने भारतीय अर्थव्यवस्था को रसातल में पहुँचा दिया और अन्ततः हम १९९० के दशक में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की बाट जोहने लगे। पर जिस प्रकार से हाल के वर्षों में भारतीय कम्पनियों का अधिग्रहण किया है, वह पाश्चात्य अर्थव्यवस्था को आईना दिखाने के लिए काफी है। यही नही आज अमेरिका में ३८ फीसदी डॉक्टर और १२ फीसदी भारतीय वैज्ञानिक और इंजीनियर भारतीय हैं तो 'माइक्रोसाफ्ट' कम्पनी के ३४ फीसदी तकनीकी विशेषज्ञ और 'इंटेल' कम्पनी में २० फीसदी इंजीनियर भारतीय हैं। आज भारत से ९० देशों को साफ्टवेयर का निर्यात किया जाता है। यह मात्र संयोग नहीं है कि टाइम, न्यूज वीक, द इकोनॉमिस्ट व फॉरेन अफेयर्स जैसी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं ने हाल के वर्षों में भारत की संस्कृति और अग्रगामी अर्थव्यवस्था पर आवरण कथा और मुख्य लेख प्रकाशित किये। अमेरिका हावर्ड बिजनेस स्कूल तो आर्थिक सुधारों के पश्चिमी मॉडल के सन्दर्भ में भी पुनर्विचार कर रहा है। हम भले ही गाँधी जी के आदर्शों को तिलांजलि दे रहे हैं पर इस स्कूल ने २० वीं सदी के 'मैनजमेंट गुरु' के रूप में भारत के राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी को मान्यता दी है। अमेरिका में पिछले कुछ वर्षों में करीब पचास विश्वविद्यालयों और कॉलेजों ने गाँधीवाद पर कोर्स आरम्भ किये हैं। यूनिवर्सिटी ऑफ वेस्ट वर्जीनिया, यूनिवर्सिटी ऑफ हवाई, जॉर्ज मेरून यूनिवर्सिटी के अलावा और भी कई विश्वविद्यालयों ने अपने यहाँ गाँधीवाद विशेषकर गाँधी जी की अहिंसा और पड़ोसियों से अपनों की तरह व्यवहार करने के दर्शन पर आधारित पाठ्यक्रम शुरू किये हैं। पाश्चात्य संस्कृति में पले-बसे लोग अब भारत आकर लगता है कि भारत की समृद्ध संस्कृति एवं विरासत के तत्वों को अपना रहे हैं। जरूरत है कि पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण करने की बजाय हम भारतीय भी अपनी संस्कृति के तत्वों को सहेजें

❑❑❑

निदेशक डाक सेवाएं, इलाहाबाद परिक्षेत्र, इलाहाबाद (उ.प्र.)

संरक्षक मण्डल - सत्यार्थ सौरभ (₹ ११,०००)

स्वामी (डॉ.) ओमानन्द सरस्वती, श्रीमान् आनन्द कुमार आर्य, श्री आर.डी. गुप्त, श्री भवानी दास आर्य, श्री सुरेश चन्द्र अग्रवाल, श्री रतिराम शर्मा, श्री दीनदयाल गुप्त, श्री बी.एल. अग्रवाल, श्री कै. देवरत्न आर्य, श्री चन्दूलाल अग्रवाल, श्री मिठाईलाल सिंह, श्री नारायण लाल मित्तल, श्री सुधाकर पीयूष,श्रीमती शारदा गुप्ता, आर्य परिवार संस्था कोटा, श्रीमती आभाआर्या, गुप्त दान दिल्ली, आर्यसमाज गाँधीधाम, गुप्तदान उदयपुर, श्री राजकुमार गुप्ता एवं सरला गुप्ता, श्री मोती लाल आर्य, श्री लक्ष्मण सराफ, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, श्री जयदेव आर्य, श्री श्रवण कुमार गुप्ता, श्रीमती सरोज वर्मा, श्री विवेक बंसल, श्री दीपचंद आर्य, श्री एम.पी. सिंह, प्रो. आर.के.एरन, श्री खुशहालचन्द आर्य, श्री विजय तायलिया, श्री वीरेन्द्र मित्तल, स्वामी (डॉ.) आर्येशानन्द सरस्वती, स्वामी प्रवासानन्द सरस्वती, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती, श्री राव हरिश्चन्द्र आर्य, श्री भारतभूषण गुप्ता, श्री कृष्ण चौपड़ा, श्री रामप्रकाश छाबड़ा, श्री विकास गुप्ता, श्री एम. विजेन्द्र कुमार टाक, श्री नरेश कुमार राणा, डॉ.मोतीलाल शर्मा, डी.ए.वी.एकेडमी, टाण्डा, श्री प्रधान जी, मध्यभारतीय आ. प्र. सभा, श्री रघुनाथ मित्तल, मिश्रीलाल आर्य कन्या इण्टर कॉलेज, टाण्डा एवं

श्री प्रहलादकृष्ण एवं श्रीमती प्रभा भार्गव
कोटा

श्री लोकेश चन्द्र टांक
बैंगलुरु

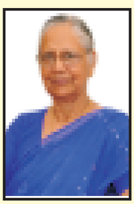

श्रीमती गायत्री पंवार
जयपुर

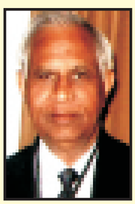

डॉ. वेद प्रकाश गुप्ता
कोटा

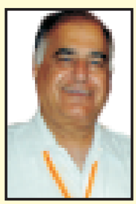

श्री वीरमुखी
लॉग्स आइलैण्ड, अमेरिका

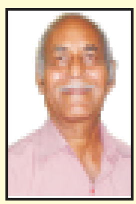

डॉ. अमृतलाल तापड़िया
उदयपुर

आर्य समाज हिरणमगरी
उदयपुर

सत्यार्थ-पीयूष

गुरुकुलीय शिक्षा की प्रमुख विशेषताएँ

गुरुकुल और गुरुकुलीय शिक्षा की कतिपय प्रमुख विशेषताओं पर संक्षेप में विचार करना उपयुक्त रहेगा।

१.गुरुकुल परिवेश- वेद में शिक्षा केन्द्रों के लिए सुन्दर और रमणीक प्रकृति की गोद में स्थापना के निर्देश हैं। प्रदूषण से रहित भौतिक पर्यावरण में रहकर, शिष्य का प्रकृति के साथ सीधा सम्पर्क हो जाता है।

उपह्वरे गिरीणाꣳसंगमे च नदीनाम्।
धिया विप्रोऽअजायत ॥ यजुर्वेद २६/१५॥

अर्थात् पर्वतों के निकट और नदियों के संगम स्थल पर गुरुओं की प्रज्ञा और क्रिया कुशलता द्वारा, प्रज्ञा और क्रिया कुशलता से युक्त, मेधावी विद्वान् तैयार होते हैं।

प्राचीन काल में प्रयाग में भारद्वाज आश्रम, नैमिषारण्य में आचार्य शौनक का आश्रम, उज्जैन के पास सान्दीपनि ऋषि का शिक्षा केन्द्र, महर्षि वाल्मीकि का आश्रम, मालिनी नदी के तट पर महर्षि कण्वाश्रम आदि गुरुकुलों की स्थापना उपरोक्त वेदादेश की अनुपालना में की गई, इसलिए महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में लिखा-

''विद्या पढ़ने का स्थान एकान्त देश में होना चाहिए। पाठशालाओं से एक योजन अर्थात् चार कोश दूर ग्राम व नगर रहे।'' इसमें महर्षि दयानन्द का आशय था कि शहरों और ग्रामों में अनेक प्रकार के आकर्षण होते हैं। उनके सुख भोग किशोर आयु के बालक और बालिकाओं को अपनी ओर आकर्षित कर उन्हें विद्याभ्यास से विमुख कर सकते हैं अतः विद्यालय पाठशाला और गुरुकुल आदि गाँव और नगरों से दूर होने से ही छात्रों को विद्याभ्यास का शुद्ध वातावरण मिल सकता है। परन्तु विद्यार्थी नागरिक जीवन से पूरी तरह न कट जावें, वे अपने अध्यापकों के साथ कभी-कभी गाँवों/नगरों में भ्रमणार्थ जा सकते हैं। ऐसे भ्रमण के समय में अध्यापकों के साथ रहने से गाँवों और नगरों आदि के जीवन के बुरे प्रभाव उन पर नहीं पड़ पायेंगे।

२. बालक-बालिकाओं के गुरुकुल अलग-अलग महर्षि दयानन्द सरस्वती बालक-बालिकाओं या स्त्री पुरुषों की सह शिक्षा के प्रबल विरोधी थे। उन्होंने लिखा है-

''लड़के-लड़कियों की पाठशाला दो कोश एक दूसरे से दूर होनी चाहिए। जो वहाँ अध्यापिका और अध्यापक या भृत्य अनुचर हों वे कन्याओं की पाठशाला में सब स्त्री और पुरुषों की पाठशाला में पुरुष रहें। स्त्री की पाठशाला में पाँच वर्ष का लड़का व पुरुषों की पाठशाला में पाँच वर्ष की लड़की भी न जाने पावे अर्थात् जब तक वे ब्रह्मचारी या ब्रह्मचारिणी रहें तब तक स्त्री या पुरुष का दर्शन, स्पर्शन, एकान्तसेवन, भाषण, विषयकथा, परस्पर क्रीड़ा, विषय का ध्यान और संग इन आठ प्रकार के मैथुन से अलग रहें और अध्यापक लोग उनको इन बातों से बचावें, जिससे विद्या, शिक्षा, शील, स्वभाव, शरीर और आत्मा के बलयुक्त हो के आनन्द को नित्य बढ़ा सकें''।

३. गुरुकुल में समानता का व्यवहार- इस विषय में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने लिखा है कि-

''गुरुकुल में सबको तुल्यवस्त्र खान-पान आसन दिये जाएँ चाहे वे राजकुमार या राजकुमारी हों चाहे दरिद्र के सन्तान हों सबको तपस्वी होना चाहिए'' (सत्यार्थ प्रकाश-तृतीय समुल्लास)

४. गुरुकुल/आश्रम निवास की अवधि में छात्र छात्राओं का माता-पिता आदि से मिलने पर प्रतिबन्ध- गुरुकुल में प्रवेश करने के पश्चात् माता पिता आदि का छात्र छात्राओं से कोई सम्पर्क नहीं होगा। महर्षि के शब्दों में ''उनके माता पिता अपने सन्तानों से या सन्तान अपने माता पिता से न मिल सकें और न किसी प्रकार का पत्र व्यवहार एक दूसरे से कर सकें। जिससे संसारी चिन्ता रहित होकर केवल विद्या बढ़ाने की चिन्ता रखें।'' (सत्यार्थ प्रकाश-तृतीय समुल्लास)

ब्रह्मचर्य महत्त्व- आधुनिक शिक्षा प्रणाली में ब्रह्मचर्य का महत्व-प्रतिपादन अथवा छात्र छात्राओं को ब्रह्मचर्य मर्यादा में रहने के निर्देश जैसे तत्त्व सर्वथा तिरोहित हैं। परन्तु गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली का यह केन्द्रीय तत्त्व है। वहाँ छात्र की संज्ञा ही ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी है। क्योंकि ब्रह्मचर्य का अर्थ है-''ब्रह्मणे वेदादि विद्यायै चर्यते इति ब्रह्मचर्य'' (योगयाज्ञवल्क्य)। अर्थात् वेदादि विद्याओं के लिए जो व्रत धारण किया जाता है उसे ब्रह्मचर्य कहते हैं। आर्ष ग्रन्थों यथा वेद, शतपथ, चरक, अष्टांग हृदय सूत्र स्थान, महाभारत, छान्दोग्य उपनिषद्, योग शास्त्र, मनुस्मृति, गृह्य सूत्र, सब ऋषियों विद्वानों ने ब्रह्मचर्य को मानव जीवन का हार्द (Nucleus) कहा है।

इस विषय में महर्षि दयानन्द ने लिखा है- ''देखो जिसके शरीर

में सुरक्षित वीर्य रहता है तब उसको अरोग्य, बुद्धि, बल, पराक्रम बढ़कर बहुत सुख की प्राप्ति होती है।'' ब्रह्मचर्य पालन के लिए यह आवश्यक है कि ब्रह्मचारी अष्ट मैथुन से दूर रहें। सर्वत्र एकाकी सोवें, वीर्य स्खलित कभी न करें। आचार्य अन्तेवासी अर्थात् अपने शिष्य और शिष्याओं को इस प्रकार उपदेश करें कि ''तू सदा सत्य बोल, धर्माचार कर, प्रमाद रहित होकर पढ़-पढ़ा, पूर्ण ब्रह्मचर्य से समस्त विद्याओं को ग्रहण कर।'' इसी प्रकार का उपदेश गुरुकुल प्रवेश के समय वेदारम्भ संस्कार में पिता की ओर से किया जाता है।

ब्रह्मचर्य-पालन के लिए महर्षि दयानन्द ने यमों (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह) तथा नियमों (शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान) को बहुत उपयोगी माना है। जैसा कि हमने पीछे लिखा है कि कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों पर नियन्त्रण बिना प्राणायाम किये नहीं हो सकता। अतः जो यम, नियम, आसन, प्राणायाम आदि अष्टयोगाङ्गों का पालन नहीं करता वह ब्रह्मचारी नहीं हो सकता और जो ब्रह्मचारी नहीं हो सकता वह तीव्रता से कठिन विषयों को ग्रहण कर लम्बे समय तक स्मरण नहीं रख सकता। महर्षि जी सत्यार्थ प्रकाश-तृतीय समुल्लास में लिखते हैं-''विद्यार्थियों को यह ब्रह्मचर्य युवकों में कम से कम २५ वर्ष और अधिक से अधिक ४८ वर्ष और युवतियों में कम से कम १६ वर्ष और अधिक से २४ वर्ष से अधिक नहीं रखना चाहिए। क्योंकि यह बड़ा कठिन काम है कि जो काम के वेग को थांभ के इन्द्रियों को आप वश में रखना। हाँ, जब तक विद्या पूरी तरह ग्रहण न कर लेवें तब तक तो ब्रह्मचर्य रखना चाहिए।''

वेद में विद्यार्थी अर्थात् इन्द्रिय संयमी को ब्रह्मचारी कहा गया है तथा शिक्षा प्राप्ति के पालनीय नियमों और कर्त्तव्यों को ब्रह्मचर्य। ब्रह्मचारी और ब्रह्मचर्य वेद में ऐसे व्यापक शब्द हैं जिनका संसार की किसी भाषा में उसके एक अक्षर का भी अनुवाद नहीं हो सकता। इसलिए वेद में विद्यार्थी, छात्र, शिष्य तथा ब्रह्मचारी एक प्रकार से पर्यायवाची शब्द हैं। (वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त, भाग- २)

ब्रह्मचर्य अर्थात् शिक्षा प्राप्ति के पालनीय नियमों के विपरीत विद्या पढ़ने-पढ़ाने के विघ्न भी हैं जिन्हें ब्रह्मचारी अथवा विद्यार्थी को पूरी तरह से छोड़ देना चाहिए जैसे कुसंग, दुष्ट व्यसन (मद्यादि सेवन, व्यभिचार आदि) पूर्ण ब्रह्मचर्य न होना, माता पिता और विद्वानों आदि का वेद प्रचार आदि में ध्यान न होना, अतिभोजन, अतिजागरण, आलस्य, माता-पिता, आचार्य आदि को सत्य मूर्ति मानकर सेवा सत्संग न कर जड़ पूजा आदि में समय व्यर्थ खोना और लोभ में, धनादि में प्रवृत्ति होकर विद्या में प्रीति न रखना इत्यादि। विद्या प्राप्ति के विघ्नों से छात्र-छात्राओं को पूरी तरह से दूर रहना चाहिए।

संपादक- अशोक आर्य

❑❑❑

दयानन्द सूक्ति - संग्रह

विद्या के अधिकारी

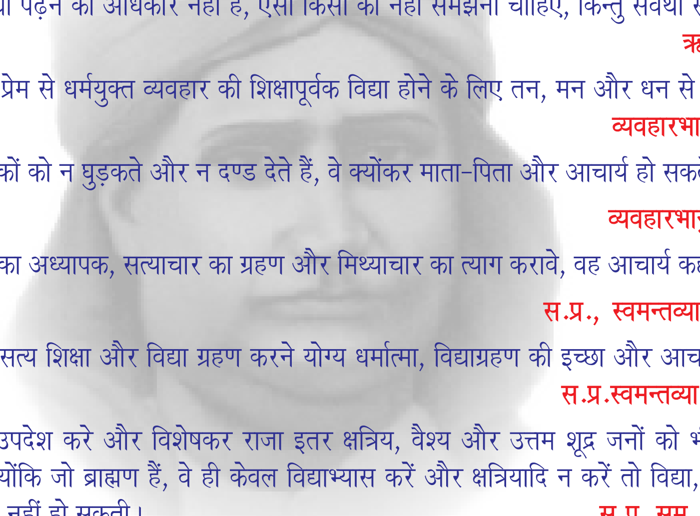

जैसे ईन्धनों से अग्नि प्रदीप्त होकर, वर्षाजल से पृथ्वी को आच्छादित करता है, वैसे ही ब्रह्मचर्य, सुशीलता, पुरुषार्थ से विद्यार्थीजन सुप्रकाशित होकर जिज्ञासुओं के हृदय में विद्या का विस्तार करते हैं। ऋ.७/१७/१

जो पराक्रम और बल को न नष्ट करे, शरीर और आत्मा की उन्नति करता हुआ रक्षक हो, उसके लिए आप्तजन विद्या दें। जो इससे विपरीत, लम्पट, दुराचारी, निन्दक हो, वह विद्याग्रहण में अधिकारी नहीं होता, यह जानो। यजु. २८/४४

किसी पुरुष व स्त्री को विद्या पढ़ने का अधिकार नहीं है, ऐसा किसी को नहीं समझना चाहिए, किन्तु सर्वथा सबको पढ़ने का अधिकार है। ऋ. १७१/२

जो विद्यार्थियों को अत्यन्त प्रेम से धर्मयुक्त व्यवहार की शिक्षापूर्वक विद्या होने के लिए तन, मन और धन से प्रयत्न करे, उसको 'आचार्य' कहते हैं। व्यवहारभानु, पृ.१७५

जो बुरी चेष्टा देखकर लड़कों को न घुड़कते और न दण्ड देते हैं, वे क्योंकर माता-पिता और आचार्य हो सकते हैं? व्यवहारभानु, पृ.१७५

जो सांगोपांग वेद विद्याओं का अध्यापक, सत्याचार का ग्रहण और मिथ्याचार का त्याग करावे, वह आचार्य कहाता है। स.प्र., स्वमन्तव्या., पृ.५६३

शिष्य उसको कहते हैं जो सत्य शिक्षा और विद्या ग्रहण करने योग्य धर्मात्मा, विद्याग्रहण की इच्छा और आचार्य का प्रिय करने वाला है। स.प्र.स्वमन्तव्या., पृ.५६४

आचार्य अपने शिष्य को उपदेश करे और विशेषकर राजा इतर क्षत्रिय, वैश्य और उत्तम शूद्र जनों को भी विद्या का अभ्यास अवश्य करावे, क्योंकि जो ब्राह्मण हैं, वे ही केवल विद्याभ्यास करें और क्षत्रियादि न करें तो विद्या, धर्म, राज्य और धनादि की वृद्धि कभी नहीं हो सकती। स.प्र. समु. ३,पृ. ५३

संकलनकर्त्ता - वेदाचार्य डॉ. रघुवीर वेदालंकार

महाभारत मेरी दृष्टि में

गतांक से आगे ...

महाभारत में एक और क्रान्तिकारी बात नजर आती है। महाभारतकार के अनुसार, हमारी प्रचलित मान्यता के विपरीत, धर्म सम्बन्धी ज्ञान पर किसी का भी एकाधिकार नहीं है। उदाहरणतया, एक कथा में एक सिद्धिप्राप्त महात्मा को धर्म का अर्थ समझने के लिए मांस बेचकर जीवनयापन करने वाले व्याध के पास जाने के लिए कहा जाता है तथा एक तपस्वी ब्राह्मण को अनाज बेचने वाले वैश्य से धर्म का मर्म जानने की सलाह दी जाती है। ज्ञान प्राप्त करने के सन्दर्भ में ही, महाभारतकार एक और अनूठे सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं कि यह लोक मनुष्यों की कर्मभूमि है। इसे अपनी आँखों से प्रत्यक्ष देखने पर ही व्यक्ति सर्वदर्शी बन सकता है- **प्रत्यक्षदर्शी लोकानां सर्वदर्शी भवेन्नरः**।

धर्म की व्याख्या करते हुए महाभारतकार कहते हैं कि सत्य के समान कोई और धर्म नहीं है- **'नास्ति सत्यसमो धर्मः**। महाभारत का लक्ष्य ही **'सत्यं च अमृतं च'** बताया जाता है। लेकिन साथ ही कृष्ण एक विलक्षण दृष्टि प्रस्तुत करते हैं।

कृष्ण कहते हैं कि सत्य बोलना आवश्यक है। लेकिन जहाँ सत्य का परिणाम असत्य और असत्य का परिणाम सत्य होता है, वहाँ सत्य न बोलकर असत्य बोलना ही उचित है। इन सब बातों का तात्पर्य यह है कि महाभारत में कहीं भी कट्टरवाद नहीं है। धर्म का मूल स्वरूप शाश्वत व सार्वदेशिक होते हुए भी, इसे महाभारत में देश और काल की परिस्थितियों के अनुरूप व्याख्यायित किया गया है।

महाभारत अर्थशास्त्र भी माना जाता है क्योंकि इसका सम्पूर्ण कथानक राजधर्म तथा अर्थव्यवस्था को भी निरूपित करता है। महाभारत में अनेक प्रसंगों के माध्यम से, विशेषतया, शान्ति, अनुशासन एवं आश्वमेधिक पर्वों में, सभासदों के लक्षण व कर्तव्य, राजोचित शिष्टाचार, प्रजा के अभ्युदय के लिए राजा (सुशासन) की आवश्यकता, राजा के कर्तव्य, राजा के लिए विद्वान् सलाहकार की आवश्यकता, राष्ट्र की रक्षा और वृद्धि के उपाय, युद्ध नीति, सैन्य संचालन की विधि, योद्धाओं के लक्षण, दण्ड नीति, दण्ड का स्वरूप तथा गुप्तचर व्याख्या आदि का बड़ा विशद् विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

इसी प्रसंग में, धृतराष्ट्र के, राजनीति में विशारद् एक मंत्री कणिक की नीति विशेष रूप से विचारणीय है। उनके अनुसार राजा का कर्तव्य है कि वह शासन में शिथिलता न आने देवे तथा यदि किसी प्रकार की कमजोरी आ भी जावे तो उसे गुप्त रखे। साथ ही दूसरों की कमजोरी जानता रहे। शत्रु देश के साथ किये जाने वाले व्यवहार का निरूपण करते हुये कणिक कहते हैं कि शत्रु को कभी भी कमजोर नहीं समझना चाहिये तथा शत्रु को समाप्त करना शुरू कर देने पर बीच में नहीं रुकना चाहिये। शत्रु यदि शरणागत भी हो जाये तो भी उस पर दया नहीं करनी चाहिये। कूटनीति की चर्चा करते हुये कणिक कहते हैं कि समय अनुकूल न हो तो शत्रु को कन्धे पर भी ढोया जा सकता है। लेकिन अवसर मिलते ही उसे घड़े की तरह फोड़ देना चाहिये। गुप्तचर रखने चाहिये और बगीचे, टहलने के स्थान, मन्दिर, तीर्थ, चौराहे, भीड़भाड़ के स्थानों पर गुप्तचर बदलते रहना चाहिये। साथ ही जिन पर आम तौर पर सन्देह न हो उन पर विशेष रूप से नजर रखना आवश्यक है।

महाभारत उत्कृष्ट मोक्षशास्त्र भी है। इसमें मोक्ष प्राप्ति हेतु भक्तिभाव से ओतप्रोत अनेक स्तोत्र एवं स्तुतियाँ हैं, जिनमें भीष्म पितामह द्वारा की गई स्तुति विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके अतिरिक्त, शान्ति, अनुशासन, आश्वमेधिक तथा आश्रमवासिक पर्वों में मोक्ष धर्म व मोक्ष के साधनों का वर्णन तथा विभिन्न दार्शनिक विचारधाराओं का सूक्ष्म विश्लेषण दिया हुआ है। साथ ही भारतीय संस्कृति से जुड़े साधना, ध्यान, उपासना, योग, व्रत उपवास, दान पुण्य आदि सभी अनुष्ठानों के महत्व तथा उपयोगिता का प्रतिपादन किया गया है।

इसी प्रकार महाभारत में अनेक कथाओं व उनके पात्रों के माध्यम से काम की वृत्तियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है जो आज भी उतना ही प्रासंगिक प्रतीत होता है। रसपूर्ण एवं भावनात्मक साहित्य की दृष्टि से आदि पर्व में शकुन्तला व ययाति, आरण्यक पर्व में नल दमयन्ती तथा सावित्री सत्यवान जैसे अनेक हृदयग्राही आख्यान हैं, जिन पर आधारित अनेक उत्कृष्ट साहित्यिक ग्रन्थों की रचना हो चुकी है।

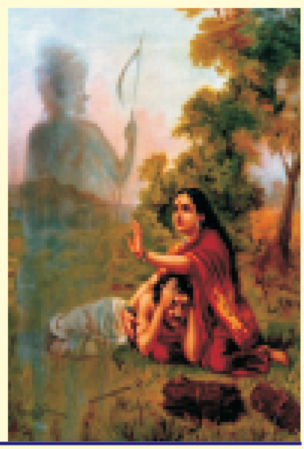

इनके अतिरिक्त महाभारत में अनेक विविध विषयों का निरूपण किया गया है, जिनमें प्रमुख हैं- सृष्टि विज्ञान, ज्योतिष, भूगोल, खगोल शास्त्र, काल का स्वरूप, राजवंशों का

इतिहास, समाज शास्त्र एवं इतिहास की व्याख्या आदि।

भगवद्गीता महाभारत का ही एक अंश है, जिसकी ख्याति के बारे में कुछ भी कहना आवश्यक नहीं है। इसके अतिरिक्त महाभारत में लगभग १२ अन्य गीतायें भी उपलब्ध हैं। इनमें विदुरगीता विशेष रूप से उल्लेखनीय है, जिसमें व्यक्तित्व विकास के अद्भुत सूत्र दिये गये हैं, जो विदुरनीति के नाम से भी प्रख्यात है।

महाभारत के आदि पर्व में एक बड़ी विचित्र कथा आती है।

वैशम्पायन कहते हैं कि पृथ्वी पर राजा लोग धर्मानुसार शासन करते थे। लेकिन तभी क्षत्रियों (अर्थात् शासकों) में राक्षस उत्पन्न होने लगे। पृथ्वी उनकी उच्छृंखलता से पीड़ित होने लगी। उन्होंने तरह तरह के रूप धारण करके पृथ्वी को भर दिया। उनके भार से त्रस्त होकर पृथ्वी ब्रह्माजी की शरण में गई। ब्रह्माजी ने देवताओं को आज्ञा दी कि पृथ्वी का भार उतारने के लिए पृथ्वी पर जाओ। इन्द्र ने भगवान को पृथ्वी का भार उतारने के लिए अवतार लेने के लिए कहा। आगे की कथा सबको मालूम है। कालान्तर में महाभारत युद्ध हुआ। धरती का भार कम हो गया। इस कथा की ऐतिहासिकता में न जाकर इसका प्रतीकार्थ देखें तथा इसे वर्तमान परिदृश्य एवं परिस्थितियों के संदर्भ में देखें, तब लगेगा मानो इतिहास अपनी पुनरावृत्ति कर रहा है।

महाभारत इतिहास है या काल्पनिक कथाओं पर आधारित महाकाव्य, यह प्रश्न महत्त्वपूर्ण नहीं है। आवश्यक है, इन कथाओं के निहितार्थ व सन्देश को समझना। **यों महाभारत के रचनाकार वेदव्यास इसे इतिहास मानते हैं।** यह वस्तुतः अधर्म पर धर्म की विजय का इतिहास है, जिसका सन्देश जीवन के हर क्षेत्र में विजय प्राप्त करने का तथा राष्ट्र में शान्ति व व्यवस्था स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त करता है। वेदव्यास ने इस विलक्षण ग्रन्थ की रचना विजय की कामना रखने वालों के लिए ही की थी। वे स्वयं कहते हैं कि यह 'जय' नामक इतिहास विजय की कामना रखने वालों को ही सुनना चाहिये-

'जयो नामेतिहासोयं श्रोतव्यो विजिगीषुणा'।

❑❑❑ राधेश्याम धूत (साभार-वैचारिकी)

ओ३म्

मुझे सत्यार्थ सौरभ का सदस्य बनना है

सदस्यता फार्म

वैदिक शिक्षाओं व भारतीय संस्कृति को जन-जन में प्रसारित करने हेतु आप द्वारा सत्यार्थ प्रकाश को समर्पित सत्यार्थ-सौरभ पत्रिका के प्रकाशन का निर्णय स्तुत्य है। मैं इस पत्रिका का संरक्षक/ आजीवन/ विशिष्ट/वार्षिक सदस्यता ग्रहण करता /करती हूँ।

पत्रिका सहयोगः-

संरक्षक पत्रिका- ११०००/-	☐
आजीवन (१५) वर्ष- १०००/-	☐
विशिष्ट सदस्य (५) वर्ष- ४००/-	☐
वार्षिक सदस्य- १००/-	☐

राशि जरिये/ ड्राफ्ट/ चैक/ मनीआर्डर/ नकद प्रेषित कर रहा/रही हूँ।

मेरा विवरण :-

१. नाम ....

....

२. पूरा पता ....

....

....

पिन ☐☐☐☐☐☐

३.टेलिफोन नं. ....

मोबाइल नं. ....

४. ई-मेल ....

नोटः

१.आप अपना सहयोग बैंक में भी जमा करवा सकते हैं बैंक खाता सं.३१०१०२०१००४१५१८ यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, मुख्य शाखा उदयपुर। ऐसा करने वाले महानुभाव अपना नाम व पता दूरभाष या पत्र द्वारा तत्काल सूचित करने का श्रम करें, जिससे समय पर रसीद भेजी जा सके।

२.आप अपनी सहयोग राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीऑर्डर से ना भेजें। यदि भेजते हैं तो दूरभाष या पत्र द्वारा सूचना अवश्य प्रेषित करें।

३.पता परिवर्तन होने पर परिवर्तित पते की सूचना अति शीघ्र भेजें।

४.जिन महानुभावों ने राशि भेज सदस्यता ग्रहण कर ली है, पर यह विवरण पत्र नही भरा है वे कृपया रिकार्ड हेतु इस प्रपत्र को भरकर अवश्य भेज दें।

५. कृपया अपने गाँव/शहर/जिला/राज्य का पिन कोड अवश्य लिखें।

Life becomes so LESS

SMS sent by- **Shri Pradeep Arya**-Chairman U.I.T. Alwar (Raj.)

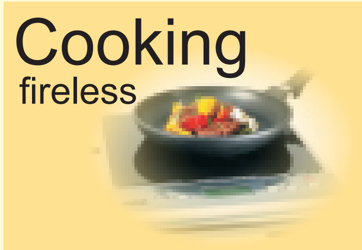

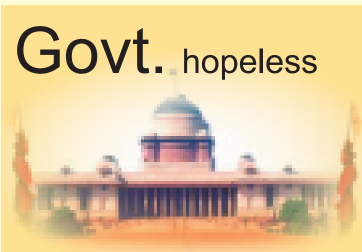

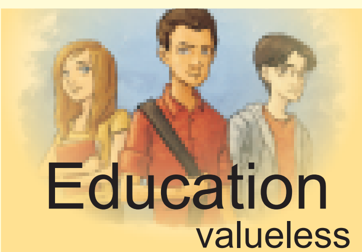

And still the expectations are ENDLESS

Dollar
Club
Bigboss
PREMIUM VEST
Cool to wear.
Hot to look.
Join us on
www.facebook.com/dollarinternational
DOLLAR INDUSTRIES LTD. KOLKATA | TIRUPUR | NEW DELHI
e-mail: bhawani@dollarinternational.com | www.dollarinternational.com

RNI Registration No. RAJHIN/2012/47777 JULY-2013 Postal Registration No. RJ/UD/29-107/2013-2015

‘तीर्थ’ जिससे दुःखसागर से पार उतरें,
कि जो सत्यभाषण, विद्या, सत्सङ्ग,
यमादि, योगाभ्यास, पुरुषार्थ,
विद्यादानादि शुभ कर्म हैं,
उसी को तीर्थ समझता हूँ,
इतर जलस्थलादि को नहीं।

सत्यार्थ प्रकाश पृ.-५९६

स्वत्वाधिकारी, श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास, उदयपुर की ओर से प्रकाशक, मुद्रक अशोक कुमार आर्य द्वारा चौधरी ऑफसेट प्रा. लि., 11/12 गुरुरामदास कॉलोनी, उदयपुर से मुद्रित तथा कार्यालय श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास नवलखा महल गुलाबबाग, महर्षि दयानन्द मार्ग, उदयपुर-313001 से प्रकाशित, सम्पादक-अशोक कुमार आर्य